विषय-सूची

	निदेशक की लेखनी से		i
	सम्पादकीय		ii
1.	जांस्कर एक संक्षिप्त परिचय	मनीष मेहता, अपर्णा शुक्ला, विनीत कुमार	1
2.	उदयपुर सौर वेधशाला : स्थापना से अब तक की यात्रा	अशोक अम्बस्था	4
3.	क्वान्टम भौतिकी (ब्रह्माण्ड तथा भौतिक जगत एवं उसकी प्रक्रियाओं की मानव समझ को नयी अंतर्दृष्टि प्रदान करने वाला विज्ञान	अखिलेश	10
4.	पृथ्वी दिवस : औचित्य, वैज्ञानिक एवं जनपक्षीय आधार	डॉ. पी.एस. नेगी	13
5.	स्टीफेन हाकिंग का वैज्ञानिकों को एक परामर्श	रमेश चन्द्र	19
6.	बूंद–बूंद नहीं बरतेंगे तो, बूंद–बूंद को तरसेंगे	डॉ. रंजना सिंह	21
7.	सतत् विकास	डॉ. मीनल मिश्रा	23
8.	स्थावराणां हिमालयः	अजय कुमार बियानी	25
9.	मातृभाषा के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा : आज के समय की महत्वपूर्ण आवश्यकता	डॉ. श्रीमती स्वाति चढ्ढा	27
10.	देहरादून का पक्षी संसार	नबनीता सेन	30
11.	पौराणिक उत्तराखण्ड की नदियाँ	डॉ. राकेश मोहन नौटियाल	32
12.	सफर	श्रीमती मंजु पंत	36
13.	उत्तराखण्ड में पहाड़ों के गांवों से पलायन : एक चिंता का विषय	डॉ. पंकज चौहान	39
14.	निशब्द	डॉ. राजकुमारी चौहान	41
15.	भारत में वर्तमान परिपेक्षय में पेट्रोल की कीमत वृद्धि की प्रासंगिकता	डॉ. नीलू कुमारी	43
16.	मौखिक इतिहास स्रोत एवं लेखन	डॉ. राकेश मोहन नौटियाल	47
17.	जीवन–ऊर्जा	सविता वशिष्ठ	50
18.	उत्तराखण्ड के कुछ संक्षिप्त तथ्य	संकलन कर्ता : एन.के. जुयाल	53
19.	भारतीय संस्कृति में हिन्दी के बारह महीनों का महत्व	रघुवीर सिंह नेगी	54
20.	भूकंप की तीव्रता एवं परिमाण	सुशील कुमार	56
21.	वीसैट तकनीकी व उसके अनुप्रयोग	छवि पंत पांडेय	58
22.	मेघालय युग : पृथ्वी के इतिहास में एक नया युग	सुशील कुमार	60
23.	स्वाणी!	मनीष मेहता	61
24.	बस्ती	संजीव कुमार	62
25.	गांधारी	सविता वशिष्ठ	63
26.	जय गूगल भैया	डॉ. पंकज चौहान	64
27.	विज्ञान एक वरदान है अभिशाप नहीं	रघुवीर सिंह नेगी	65
28.	समय	कल्पना चंदेल	66
28.	संस्थान समाचार		67

निदेशक की कलम से

मुझे यह बताते हुये असीम हर्ष का अनुभव हो रहा है कि वाडिया संस्थान ने इस वर्ष अपनी यात्रा के पचास वर्ष पूरे कर लिये हैं। 29 जून, 2017 से 29 जून, 2018 तक के समय को संस्थान ने स्वर्ण जयंती वर्ष मनाया और अनेक कार्यक्रम आयोजित किये । संस्थान के 51 वे वर्ष में अश्मिका का चौबीसवाँ संस्करण, संस्थान की यात्रा में अश्मिका की भागीदारी को स्पष्ट करता है ।

वैज्ञानिक विशेषकर भू–विज्ञान से सम्बन्धित जानकारियों को जनसामान्य भाषा में, कथा–कहानियों, कविताओं, संस्मरणों को सरल, सुगम भाषा मे लिखकर संप्रेषण करने हेतु अश्मिका एक सशक्त माध्यम बन रही है । संस्थान की राजभाषा समिति की यह पत्रिका जनसामान्य को वैज्ञानिक विचारता तो उपलब्ध कराती ही है साथ ही वैज्ञानिकों के साहित्य सृजन पहलुओं से भी अवगत कराती है ।

अश्मिका ने अपनी यात्रा में उत्तरोत्तर गुणात्मक अभिवर्धन किया है । जिसका आभास अश्मिका मे प्रकाशित लेखों से होता है ।

अश्मिका अपने प्रयासों मे सफल हो व भविष्य मे भी उन्नति के पथ पर अग्रसर रहे। अश्मिका को मेरी असीम शुभकामनायें ।

मीरा तिवारी

सम्पादकीय...

अश्मिका का चौबीसवाँ अंक आपके सम्मुख रखते हुये हिन्दी की वर्तमान दिशा और दशा पर विचार उठते हैं। हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग की अपील 1910 में काशी में आयोजित प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन में पं. मदन मोहन मालवीय के उद्‌बोधन के समय से काफी पहले से ही होती आ रही है । तब से आज तक के समयानुक्रम में सामाजिक विकास कई सोपानों से गुजरा है और इस यात्रा में हिन्दी भाषा के प्रति संवेदनाओं में भी परिवर्तन हुआ है। कारक कई हैं परन्तु भाषा का विकास हुआ है, हिन्दी भाषा विस्तृत हुई है। इसी कड़ी में कागज कलम से निकलकर तकनीक का सहारा लेते हुये समय के साथ चलने की लड़खड़ाती कोशिशों से गुजरते हुये हिन्दी और अन्य भारतीय भाषायें कई नवीन संसाधनों के साथ आज विश्व में अन्य भाषाओं के समान्तर या उनसे आगे दृढ़ता से खड़ी है । इन संसाधनों के साथ हम वर्तमान प्रौद्योगिकी के साथ हिन्दी भाषा अथवा अन्य किसी भारतीय भाषा में हाथ मिला सकते हैं ।

इन्ही संसाधनों में एक है श्रुत लेखन यानि सुनकर लिखना। प्रौद्योगिकी के संदर्भ में इसे समझने की कोशिश करें तो कम्प्यूटर हमसे हमारी भाषा में हमारी बात सुने और हमारी ही भाषा मे उसे लिख दे। अर्थात टंकण से मुक्ति। कम्प्यूटर पर लिखने के लिये आवश्यकता है तो सिर्फ एक अच्छी गुणवत्ता के माईक की। सुनने में कठिन लगता है परन्तु अपने चारो ओर झांकेगे तो पायेंगे स्मार्ट फोन पर सभी को, विशेषकर बच्चों को जो बहुतायत में इसका प्रयोग कर रहें हैं। चाहे वह यु–टयूब पर वीडियो खोजना हो, गुगल पर किसी विषय में संदर्भ ढूंढना हो अथवा फोन से किसी को फोन नं. खोजना, संबधित स्पीकर को टैप करो और बोलकर अपना कार्य करवाओ। मोबाइल श्रुत लेख तकनीक का प्रयोग कर यथासंभव परिणाम सामने ले आता है । यह तकनीक शैशव अवस्था से आगे बढ़ चुकी है और अब आप संक्षिप्त निर्देशों के अतिरिक्त विस्तृत दस्तावेज भी लिख सकते हैं । कुछ वेबसाइट्स जिनमें गुगल डाक्युमेंट भी शामिल है विस्तृत दस्तावेज लिखने के लिये अन्य सुविधाओं के अतिरिक्त श्रुत लेख की सुविधा भी उपलब्ध करा रहे हैं। इस सुविधा का प्रयोग करते हुये शब्द उच्चारण का ध्यान रखना है। शब्द उच्चारण पहचानने के लिये ध्वनि पहचान की यह तकनीक आर्टिफिशियल न्युरल नैटवर्क अल्गोरिदम का प्रयोग करती है। जैसे–जैसे प्रयोग बढ़ता है उच्चारण को लेकर त्रुटियां कम होने लगती हैं।

प्रौद्योगिकी क्षेत्र से इतना होने पर भी क्या भाषायी प्रयोग को लेकर हम अपनी हठधर्मिता छोड़ सकेंगे। यह यक्ष प्रश्न तो भविष्य में उत्तरित होगा परन्तु हमें आशावदी होकर अपना प्रयास जारी रखना चाहिये।

– **गौतम रावत**

जांस्कर एक संक्षिप्त परिचय

मनीष मेहता, अपर्णा शुक्ला, विनीत कुमार
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

प्रस्तावना

ज़ांस्कर करगिल जिले का एक उपजिला या तहसील है। यह जम्मू कश्मीर राज्य के दक्षिण भाग में स्थित है तथा इसका प्रशासनिक केंद्र पदम् है। मुख्यतः यहाँ पर दो समुदाय (मुस्लिम और बौद्ध) के लोग रहते है। इन लोगो का रहन सहन और खान पान एक जैसा है बस धर्म अलग अलग है। सर्दियों में यहाँ बहुत ठण्ड पड़ती है और तापमान लगभग – 45 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है और सारे आवाजाही के मार्ग बंद हो जाते हैं। तापमान बहुत कम होने के कारण यहाँ पर लगभग सभी जल स्रोत जैसे नदी, तालाब, झरने, आदि ठण्ड से जम जाते हैं। इन्ही कारणों से ज़ांस्कर नदी सर्दियों में बिलकुल जम जाती है और सर्दियों में व्यापार के लिए नया रास्ता बनाती है, जो चादर ट्रैक के नाम से प्रसिद्ध है। जो सर्दियों के दिनों में परंपरागत रूप से यात्रा का एकमात्र रास्ता है। अब यह ट्रैक अंतर्राष्ट्रीय साहसी पर्यटकों के लिए लोकप्रिय हो गया है। हर साल सर्दियों में यहाँ पर लाखो देश विदेश से पर्यटक आते हैं और इस रास्ते का भरपूर आनंद लेते है।

ग्रीष्म काल में, यहाँ पर गाड़ियों द्वारा सफर होता है। पर्यटक लेह से कारगिल होते हुए पदम् पहुंचते हैं। रास्ते में पानीखेर, परकाचिक, रंगधम गांव आते हैं जिनका प्राकृतिक सौंदर्य अलौकिक है। इनमे पानीखेर और परकाचिक में मुस्लिम समुदाय के लोग रहते हैं तथा रंगधम में बौद्ध समुदाय के लोग रहते हैं। रंगधम से पदम् जाने के लिए रास्ते में एक दर्रा आता है जिसको पेंसिल दर्रा कहते है, यह दर्रा समुद्र तल से लगभग 4200 मी की ऊंचाई पर स्थित है। यह दर्रा हम वाडिया हिमालय भू विज्ञानं संस्थान के वैज्ञानिकों का बेस कैंप है। हम लोग यहीं से पेंसिलुग्पा और ड्रंग दुरंग हिमनदों का अवलोकन करते हैं।

जलवायु

ज़ांस्कर एक उच्च ऊंचाई वाला ठंडा रेगिस्तान है, जो उच्च हिमालय के पश्चिमी किनारे पर बसा है। उच्च हिमालय की अधिक ऊंचाई होने के कारण, ये मानसून हवाओ को लद्दाख वो ज़ांस्कर में जाने से रोकता है, जिसके कारण वह पर गर्मियों में हल्का गरम व शुष्क मौसम रहता है, तथा बारिश व हिमपात इस मौसम में मुश्किल से होता है। हाल ही के दशक में जलवायु परिवर्तन की वजह से, गर्मियों के मौसम में वर्षा का होना आम सी बात हो गयी है। पिछले साल 2016 में हमारे क्षेत्रीय कार्य के दौरान तीन दिन तक लगातार परकाचिक गाँव में बारिश हुई थी और उच्च क्षेत्रों में अच्छा हिमपात हुआ था।

जाड़ो में यहाँ का मौसम पश्चिमी विक्षोम की हवाओ पर निर्भर करता है जो भूमध्य सागर, कैस्पियन सागर और ब्लैक सागर से आर्द्रता लेकर आता है और इस क्षेत्र में हिमपात करता है। यहाँ पर गर्मियों की तुलना में सर्दियों में अधिक वर्षा और हिमपात होता है, जिससे यहाँ के हिमनद हिमालय के अन्य क्षेत्र की तुलना में अधिक स्वस्थ व आकर्षक हैं तथा हिमनदों का आकर भी बड़ा है।

भौगोलिक स्थिति

भौगोलिक दृष्टि से ज़ांस्कर क्षेत्र को समझना बहुत कठिन है। यह उच्च हिमालय क्षेत्र 32°40′ – 33° 52 ′ उत्तर और 78°23′–79°40′ दक्षिण तक फैला है यहाँ की मुख्य नदियाँ सुरु और डोडा (ज़ांस्कर) है ये दोनों नदिया सिंधु की सहायक नदिया हैं (चित्र–1)। दोनों नदिया पेंसिल दर्रे से निकलती हैं। सुरु नदी का उद्गम स्थान पेंसिलुग्पा हिमनद (3700 मी) से प्रवाह होता है और उत्तर से पश्चिम की ओर बहती हुई लगभग 200 किमी का सफर तय कर के 2500 मी उंचाई के आसपास सिंधु नदी में मिलती है। इस क्षेत्र में हिमोढ़ और जलोढ़ आकृतियाँ ही प्रमुख रूप से स्थलाकृति का निर्माण करती है। ये आकृतियाँ, जो परा–जलवायु वैज्ञानिको को अनुसन्धान के लिए प्रेरित करती है। यहाँ पर हिमनदों का प्रभाव अधिक रहा होगा, क्योंकि हिमनदों द्वारा जमा किये गए मलबों के अवशेष मोरेन के

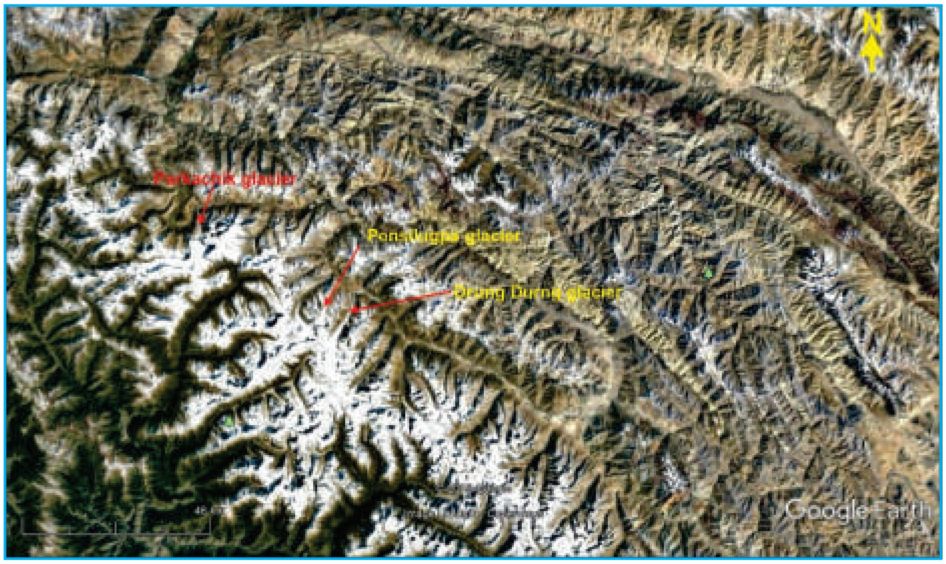

चित्र–1 : गूगल अर्थ की इमेज अध्यन क्षेत्र को दिखा रही है

रूप में आज भी व्यवस्थित है। ये मोरेन हिमनदों के वृद्धि की 5 अवस्थाये दिखाती हैं, जो ये दिखलाती है की इन क्षेत्रों में हिमनदों के आयतन में 5 बार बृद्धि हुई।

इसी तरह डोडा नदी जो आगे चल कर ज़ांस्कर नदी के नाम से जानी जाती है, ड्रुंग दुरंग हिमनद (4100 मी) से निकलती है। यह नदी दक्षिण से पूरब की और प्रवाह करती हुई नीमू के पास लगभग 3000 मी के आसपास सिंधु नदी में मिलती है। यह नदी सर्दियों में लगभग पूरी तरह जम जाती है और सर्दियों में व्यापार व रसद सामग्री पहुंचाने के लिए उपयोगी सिद्ध होती है। इस क्षेत्र में हिमनदों द्वारा जमा किये गए मलबों की प्रचुर मात्रा है और यहाँ भी हिमनदों की वृद्धि की 5 अवस्थायें मिलती है।

हिमनदों की स्थिति
सुरु नदी घाटी

सुरु नदी का उदगम पेंसिलुग्पा हिमनद (4700 मी) से होता है और चाटहंग (2335 मी) के पास यह सिंध नदी में मिलती है। सुरु नदी घाटी में लगभग 284 हिमनद हैं जिन्होंने लगभग 719 वर्ग क्षेत्रफल को ढका है (जी एस आई, 2009)। इस क्षेत्र में लगभग सभी हिमनद दक्षिणी ढलानों में स्थित हैं, जब की उत्तरी ढलानों में हिमनद ना के बराबर हैं। इन हिमनदों की लम्बाई 1 किमी से 18 किमी तक है तथा इनका आयतन लगभग 46 घन किमी है। इनमे मुख्य हिमनद निम्नलिखित है।

कांगरीज़ हिमनद या परकाचिक हिमनद

लगभग 18 किमी लम्बा यह हिमनद उत्तर पूरब से घूमता हुआ उत्तर की और बहता है। हिमनद का क्षेत्रफल लगभग 45 वर्ग किलोमीटर है और इसका स्नोआउट की समुद्र तल से ऊंचाई लगभग 3560 मी है (चित्र–2)। यह इस क्षेत्र का एक बहुत सुन्दर और आकर्षक हिमनद है और मोटर सड़क के बिल्कुल पास है।गंजु एवं कोल (2013) के अनुसार यह हिमनद 1902 से बिलकुल भी पीछे नहीं खिसका है बस इसकी सतह की मोटाई कम हुई है।

चित्र–2 : कांगरीज़ हिमनद के स्नोआउट का मनोरम दृश्य

सपथ हिमनद

यह हिमनद लगभग 8 किमी लम्बा है और 17 वर्ग किलोमीटर तक फैला है। इस हिमनद के आगे की स्थलाकृति को देख कर ये लगता है की ये हिमनद कभी बहुत बड़ा रहा होगा और इनके हिम की मोटाई लगभग 100 मी से ज्यादा रही होगी। आज यह हिमनद लगभग 5 किमी पीछे खिसक गया है और इसका स्नोआउट समुद्र तल से लगभग 4200 मी की ऊंचाई पर स्थित है।

लालुंग हिमनद

यह हिमनद लगभग 15 किमी लम्बा है तथा 20 किमी के क्षेत्र में फैला है, यह पेंसिलुग्पा हिमनद के बाद दूसरा हिमनद है जो सबसे ऊंचाई पर स्थित है। इसका स्नोआउट समुद्र तल से लगभग 4200 मी पर स्थित है।

पेंसिलुग्पा हिमनद

यह इस क्षेत्र का मुख्य हिमनद है जिससे सुरु नदी निकलती है ये कभी इस घाटी का मुख्य ट्रंक हिमनद रहा होगा और सारे हिमनद इस से ही जुड़े हुए रहे होंगे। यह हिमनद 8 किमी लम्बा और लगभग 16 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला हुआ है। इस हिमनद का लगभग 25% भाग मलबे में दबा है और इसका स्नोआउट समुद्र तल से लगभग 4700 मी की ऊंचाई पर है।

ज़ांस्कर नदी घाटी

ज़ांस्कर या डोडा नदी का उदगम स्थान ड्रंग दुरंग हिमनद से होता है लगभग 200 किमी लम्बी यह नदी घाटी में लगभग 697 हिमनद है जो की क्षेत्र का लगभग 1080 वर्ग किमी क्षेत्रफल लिए हुए है। ये हिमनद 1 किमी से 72 वर्ग किमी तक के है तहत लगभग 60 घन किमी का आयतन लिए हुए है। ये हिमनद 3900 मी से 6500 मी की ऊंचाई तक फैले है। कुछ मुख्य हिमनद निम्न है।

ड्रंग दुरंग हिमनद

यह इस क्षेत्र का सबसे बड़ा हिमनद है जिससे ज़ांस्कर नदी का उदगम् होता है। यह 23 किमी लम्बा एवं लगभग 72 वर्ग किमी के क्षेत्र में फैला हुआ है (चित्र–3)। यह इस घाटी का मुख्य आकर्षक हिमनद है और देश विदेश से पर्यटक इस हिमनद को देखने के

चित्र–3 : ड्रंग दुरंग हिमनद के संचय और पृथक्करण क्षेत्र को दिखता हुआ चित्र

लिए इस घाटी मे आते हैं। यह लगभग स्वच्छ हिमनद है तथा दिखने मे बर्फ की नदी जैसा दिखता है।

हिसकिरा हिमनद

यह हिमनद लगभग 14 किमी लम्बा और 18 वर्ग किमी तक फैला है।

कांगा हिमनद

यह हिमनद 17 किमी लम्बा और इसका क्षेत्रफल लगभग 58 वर्ग किमी है।

हग्सु हिमनद

इस हिमनद की लम्बाई भी लगभग 17 किमी है और यह 58 वर्ग किमी के क्षेत्र में फैला हुआ है।

उपसंहार

पश्चिमी हिमालय का यह क्षेत्र जल स्रोतो के लिए बहुत सम्पन्न है। यहाँ पर लगभग 981 हिमनद है, जो लगभग 1799 वर्ग किमी क्षेत्रफल में फैले हुए है। ये हिमनद अपने में लगभग 108 घन किमी बर्फ इकट्ठा किये हुए हैं जो हर साल इस क्षेत्र को हज़ारो घन मी पानी उपलब्ध करवाते हैं। पर्यटन की दृष्टि से यह क्षेत्र सर्दियों और गर्मियों के लिए बहुत अच्छा है और साहसिक पर्यटक यहाँ पर हर मौसम में आते हैं। लद्दाख के इस क्षेत्र की ओर सरकार को ध्यान देना चाहिए और इस क्षेत्र का विकास करना चाहिए।

उदयपुर सौर वेधशाला : स्थापना से अब तक की यात्रा

अशोक अम्बस्था
उदयपुर सौर वेधशाला

रात्रिकालीन अंधेरे आकाश में अनगिनत सितारे जगमगाते हुए दिखाई देते हैं, परन्तु दिन के उजाले को फैलाते हुए हमारा दिन का तारा सूर्य बाकी सभी सितारों को अपने प्रकाश से ओझल कर देता है। हमारी पृथ्वी सहित सौरमंडल के अन्य सभी सदस्य ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। पृथ्वी पर हर प्रकार के जीवन और ऊर्जा के लिए सूर्य की बड़ी महत्ता और भूमिका है। इस वार्ता में सूर्य की संक्षिप्त जानकारी, भारत में सौर खगोल भौतिकी के विकास और विशेषकर उदयपुर सौर वेधशाला के प्रारम्भ से अब तक की यात्रा का एक संक्षिप्त परिचय देने का प्रयास किया जाएगा।

हमारा सूर्य अत्यधिक तापक्रम का गैसीय पिंड है और एक मध्यम श्रेणी का तारा है, जिसकी आयु 4.6×10^9 वर्ष, मात्रा लगभग 2×10^{33} ग्राम, व्यास 13,92,000 कि.मी., पृथ्वी से औसत दूरी 15 करोड़ कि. मी., चमक या ल्युमिनोसिटी 3.85×10^{26} वॉट है। सूर्य की बाहरी परत, प्रभामंडल या फोटोस्फीयर, जो हमें साधारणतः दिखाई देता है, की मोटाई लगभग 100 कि. मी., और तापक्रम ~5770 डिग्री केल्विन है। यह परत ही दृश्य प्रकाश का लगभग सम्पूर्ण स्रोत है।

प्रभामंडल के ऊपर की ओर लगभग 2500 किमी की ऊंचाई तक रक्तवर्ण मंडल या क्रोमोस्फीयर स्थित है, जिसका औसत तापक्रम 10,000 डिग्री केल्विन है। यह परत अपने विरल घनत्व और मद्धिम प्रकाश के कारण अदृश्य है, और पृथ्वी के सतह से सिर्फ विशेष उपकरणों के द्वारा, अथवा पूर्ण सूर्य–ग्रहण के समय ही अवलोकित होता है।

सौर वातावरण की सबसे बाहरी अत्यधिक विरल घनत्व वाली परत सौरकिरीट या कोरोना है, जिसका तापक्रम 10,00,000 डिग्री केल्विन से भी अधिक है। यह पृथ्वी के सतह स्थित सौर उपकरणों के लिए भी अदृश्य है, परन्तु पूर्ण सूर्यग्रहण के समय अदभुत, अलौकिक ज्वाला के रूप में दिखाई देती है। कोरोना का कई लाख डिग्री तापमान का सौर प्लाज्मा, पराबैंगनी और एक्स–रे उत्सर्जन करने के लिए पर्याप्त है, जिन्हे प्रयुक्त कर हम कोरोना का प्रेक्षण कर सकते हैं। परन्तु ये किरणें पृथ्वी के ऊपरी वायुमंडल में ही अवशोषित हो जाती हैं, और धरातल तक नहीं पहुँच पाती हैं, अतः सूर्य के किरीट के पराबैंगनी और एक्स–रे रूप का अवलोकन अंतरिक्ष से ही किया जा सकता है।

सूर्य के बाहरी परत, प्रभामंडल, के अंदर छिपी सूर्य की आतंरिक संरचना हमें दिखाई नहीं देती है। परन्तु गणितीय तंत्र के माध्यम से सूर्य के अंदरूनी भागों की जानकारी करने में मदद मिलती है। सूर्य के केंद्रीय 25% भाग में अत्यधिक गुरुत्वाकर्षण से घनत्व 150 ग्राम/cc एवं तापमान 15×10^6 डिग्री केल्विन से भी अधिक है। यह उच्च तापमान और घनत्व हाइड्रोजन के परमाणु संलयन द्वारा हीलियम और अन्य भारी तत्वों में परिवर्तित करने के लिए उपयुक्त परिस्थिति हैं, जिससे सूर्य के इस केंद्रीय इंजन में अनवरत रूप से ऊर्जा का उत्पादन होता रहता है। इस ऊर्जा का केंद्र से बाहर विकिरण क्षेत्र में प्रसारण, विकिरण, और फिर उस से बाहर संवहन के द्वारा होता है। अंततः सौर विकिरण का उत्सर्जन गामा किरणों से रेडियो तरंग तक सम्पूर्ण विद्युतचुंबकीय वर्णक्रम पर होता है।

सूर्य के सतह, फोटोस्फीयर या प्रभामंडल पर स्थित कम तापमान के गैसों द्वारा प्रकाश के अवशोषण से वर्णक्रमीय रेखाएं उत्पन्न हो जाती हैं, जिन्हे फ्रॉनहोफर रेखाएं कहा जाता है। ऐसी 20,000 से अधिक अवशोषण रेखाएं सौर प्रभामंडल के वर्णक्रम में पहचानी गई हैं, जो सौर प्रभामंडल और वर्णमण्डल पर मौजूद तत्वों की छाप हैं। ये वर्णक्रमीय रेखाएं सौर वातावरण में होने वाले गतिविधिओं का वेग, चुंबकीय क्षेत्र की तीव्रता, और तापमान के मापन में उपयोगी हैं। सूर्य के विकिरण का प्रसारण पृथ्वी के वायुमंडल के माध्यम से होकर धरातल तक केवल दृश्य एवं रेडियो विकिरण का हो पाता है, अन्य तरंगें वायुमंडल में ही अवशोषित हो जाती हैं। इस प्रकार धरातल से सूर्य के अवलोकन और प्रतिबिम्ब प्राप्त करने के लिए हम दृश्य एवं रेडियो विकिरण का ही उपयोग कर सकते हैं।

दृश्य विकिरण से सूर्य के बाहरी आवरण में विभिन्न प्रकार के संरचनाओं को देखा जा सकता है, जिनमे गहरे काले सौर कलंक प्रमुख है। ये सौर कलंक अत्यधिक तीव्रता के चुम्बकीय क्षेत्र और विस्फोटक घटनाओं के केंद्र होते हैं। इनमें मुख्यतः सौर फ्लेयर हैं जिनमें विकिरण, ऊर्जावान कणों एवं प्लाज्मा का अचानक स्थानीयकृत विस्फोटक उत्सर्जन कुछ मिनटों से घंटों तक होता है। ये सूर्य के बाहरी सतह से प्लाज्मा गुच्छ का प्रक्षेपण भी कर सकते हैं।

पिछले कुछ वर्षों से अंतरिक्ष से सूर्य के अवलोकन की सफलता के कारण कोरोनल मास इजेक्शन (CME) नामक विस्फोटक घटनाओं को भी अब बिना किसी रुकावट के नियमित रूप से देखा जा सकता है, जो सौर फ्लेयर जैसे ही ऊर्जावान होते हैं। इनकी गति 10 से 2000 कि.मी. प्रति सेकंड तक होती है। सौर फ्लेयर और कोरोनल मास इजेक्शन सूर्य की अल्पावधि की विस्फोटक गतिविधियों के द्योतक हैं, जिनके द्वारा अंतरग्रहीय माध्यम एवं पृथ्वी एवं बाह्य ग्रहों तक हलचल का प्रसार हो सकता है।

सौर हलचलों से पारस्परिक अन्तःक्रिया के कारण पृथ्वी के बाहरी चुम्बकीय कवच और आयनमंडल पर विभिन्न प्रभाव एवं गतिविधियां उत्पन्न हो जाती हैं। यहाँ तक की संचार और उपग्रहों के संचालन में भी व्यवधान हो जाते हैं। इस कारण सूर्य के ऊर्जावान गतिविधियों का गहन अवलोकन और उनका पूर्वानुमान सौर वैज्ञानिकों के लिए महत्वपूर्ण शोध का विषय है। इस विषय को अब अंतरिक्ष मौसम (Space weather) के रूप में आजकल बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। सूर्य की ये विस्फोटक घटनायें भी हमेशा एक जैसी नहीं होती हैं, और सूर्य में इन गतिविविधियों का एक सक्रियता चक्र संचलित होता है । पिछले 400 वर्षों के सौरकलंक अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि सूर्य के इन विस्फोटक और ऊर्जावान सक्रियता का उतार–चढाव का 11 वर्षीय समयचक्र के साथ परिवर्तन होता है।

भारत की प्राचीन संस्कृति में सूर्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। साथ ही भारत में सूर्य के अध्ययन की खगोलीय परंपरा भी रही है। प्रागैतिहासिक एवं वैदिक काल में सूर्यग्रहण का प्राचीनतम उल्लेख ऋग्वेद (1700 से 1400 बी.सी.) में मिलता है। ग्रहण के विभिन्न आयामों का विस्तृत वर्णन पञ्चविंसा ब्राह्मण ग्रन्थ (900 से 600 बी.सी.) में किया गया है। सूर्य सिद्धांत का उपयोग सर्वप्रथम 3 शताब्दी ई.पू. में प्राचीन हिन्दू खगोलविज्ञान कैलेंडर और सूर्य और चंद्रमा की गति राशिचक्र (जोडिएक) गणना के लिए हुआ। आर्यभट्ट (476–550 ए.डी.) ने आर्यभट्टीय, सूर्यसिद्धांत (पृथ्वी और सूर्य के मध्य चन्द्रमा के पारगमन से ग्रहण का औपचारिक सिद्धांत) का प्रतिपादन किया था।

हमारे देश में सूर्य पूजन की परंपरा सैकड़ों वर्ष पुरानी है। हिंदू वैदिक शास्त्रों में सूर्य को अपार ऊर्जा और प्रकाश के स्रोत के रूप में सूर्य भगवान या आदित्य के नाम से जाना और पूजा जाता है। इस बात का प्रमाण है हर क्षेत्र में पाये जाने वाले प्राचीन सूर्य मंदिर! जैसे मोढेरा सूर्यमंदिर, जो गुजरात के सूर्यवंशी राजा भीमदेव सोलंकी द्वारा 1026 ए.डी. में निर्मित किया गया, और ओडिशा का विशाल कोणार्क सूर्यमंदिर (13वीं शताब्दी)। प्राचीन भारत के कोने कोने में और भी अनेक सूर्यमंदिर स्थित हैं जैसे श्रीनगर (कश्मीर) के समीप मार्तण्ड स्थित प्राचीन सूर्य मंदिर के भग्नावशेष (प्रथम शताब्दी); सूर्यनारकोईल, कुम्भकोणम, तमिलनाडु; सूर्यमंदिर, तारेगना, बिहार (6वीं शताब्दी); सूर्यनारायण मंदिर, अर्सविल्ली, आंध्रा (7वीं शताब्दी), सूर्य पहाड़ मंदिर, आसाम; भ्रमन्यदेव मंदिर, उन्नाव, झाँसी; सूर्यमंदिर, मुल्तान (पाकिस्तान) के भग्नावशेष (7वीं शताब्दी)।

आधुनिक युग में भी सूर्य के अध्ययन का महत्व बना हुआ है, क्योंकि सूर्य की पृथ्वी से समीपता के कारण इसकी बाहरी सतह का सूक्ष्मता से अवलोकन किया जा सकता है, जो अन्य किसी तारे के लिए संभव नहीं है। सूर्य के गहन अवलोकन और शोध द्वारा हमें अत्यधिक दूरी पर स्थित अन्यान्य तारो के जीवन चक्र और उनके संरचना के बारे में समझने में सहायता मिलती है, जो हम बहुत शक्तिशाली टेलिस्कोपों से भी बिन्दुवत ही दिखाई देते हैं। आधुनिक सूर्यमंदिर दरअसल सौर वेधशालाओं को कहा जा सकता है, जहां से विविध प्रकार के दूरदर्शी यंत्रों एवं उपकरणों द्वारा सूर्य के सतह पर होने वाले गतिविधियों एवं संरचना का नियमित अवलोकन किया जाता है।

मध्यकालीन भारत में खगोलविज्ञान का प्रारम्भ यूरोपीय युग (17–18 वीं सदी) से माना जा सकता है। सत्रहवीं सदी से यूरोपियों द्वारा कई महत्वपूर्ण भारतीय

खगोलीय अभियान प्रारम्भ किये गए, जैसे बुध एवं शुक्र पारगमन (फ्रांसीसी अभियान ले गेंतिल द्वारा 1761 और 1769 में)। भारत में टेलिस्कोप का प्रथम उपयोग 1651 में जेरेमिया शैकार्ली द्वारा सूरत से किया गया, अर्थात गैलेलिओ द्वारा 1609 में टेलिस्कोप के आविष्कार के सिर्फ 40 वर्ष बाद! 1689 में फ्रांस के फादर ज्यों रिकॉड ने पांडिचेरी से चमकदार सितारे अल्फ़ा सेंटौरी की युगल (binary) प्रकृति की खोज की। इस प्रकार 18 वीं सदी के मध्य तक यूरोपियों की मदद से आधुनिक खगोलविज्ञान भारत में अपनी जड़ें ज़माने और आकार लेने लगा। इसी दौरान जयपुर के सवाई महाराजा जयसिंह (1688–1743) ने जंतर मंतर नामक खगोलीय वास्तु उपकरणों का संग्रह जयपुर, दिल्ली, उज्जैन, मथुरा और वाराणसी में 1724 और 1735 के बीच स्थापित किया। ये विशालकाय यंत्र दिन का समय, सूर्य के झुकाव और अन्य खगोलीय पिंड के पारगमन समय को शुद्धता से मापने के लिए उपयोगी थे, और जयपुर तथा दिल्ली स्थित उपकरण तो अब भी अच्छी हालत में, आकर्षण का केंद्र बने हुए हैं ।

ब्रिटिश भारत के प्रशासनिक कर्मचारी विलियम पेट्री एवं सर्वेयर–खगोलविद माइकेल टॉपिंग ने एग्मोर, मद्रास में भारत की प्रथम आधुनिक खगोल वेधशाला को 1786 में स्थापित किया। इस वेधशाला के लिए दूरदर्शी यन्त्र एवं अन्य उपकरण ब्रिटेन एवं फ्रांस से प्राप्त किये गए। लगभग एक सदी तक सितारों पर कार्य हेतु यह भारत की एकमात्र खगोल वेधशाला रही। परन्तु 1899 से यह वेधशाला मौसम सबंधी सांख्यिकी के लिए सीमित रह गयी। इसी प्रकार 1825 के आसपास ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा सर्वेक्षण विभाग कलकत्ता में एक पारगमन दूरबीन, ALTI–दिगंश सर्कल, और खगोलीय दूरबीन स्थापित किये गए, पर यह वेधशाला भी ज्यादातर मौसम के जानकारी के लिए ही सीमित रही।

जोसफ नोर्मन लॉकयर ने 1877 में सुझाव दिया कि सूर्य का प्रभामण्डलीय फोटोग्राफी दैनिक रूप से लेना महत्वपूर्ण होगा, इस प्रकार सौर फोटोग्राफी को 1878 में देहरादून में शुरू किया गया। 1891 में पोगसन की मृत्यु के बाद, ब्रिटिश खगोलविद मिची स्मिथ ने मद्रास वेधशाला में फोटोहेलिओग्राफ, स्पेक्ट्रोग्राफ, एक 6 इंच इक्वेटोरियल, एक पारगमन (ट्रांजिट) दूरबीन, और क्रोनोग्राफ़ जैसे कई उपकरणों को स्थापित किया। परन्तु यह भी महसूस किया जाने लगा कि मद्रास इन उपकरणों के संचालन के लिए उपयुक्त स्थान नहीं था। समय के साथ अच्छी गुणवत्ता वाले सौर डेटा इकट्ठा करने के लिए एक बेहतर स्थान की तलाश की आवश्यकता होने लगी। हालांकि इस मामले को मजबूत करने के लिए भारतीय मानसून के साथ सौर सम्बन्ध के अध्ययन को प्रमुख कारण बताया गया, न कि सूर्य के शोध को, जो उस समय प्रमुखकता का विषय नहीं था। अंततः मद्रास वेधशाला की दूरबीनों को कोडाइकनाल भेजने का निर्णय 1899 में ले लिया गया। कोडाइकनाल वेधशाला की स्थापना भारत में सूर्य की नियमित और व्यवस्थित अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण कदम था। वहां पर आयनमंडल के नियमित निरीक्षण करने के लिए प्रयोगशाला भी स्थापित की गयी। पिछले 100 वर्षों से अधिक समय से कोडाईकनाल वेधशाला द्वारा नियमित रूप से सूर्यकलंकों का फोटोग्राफ लिया जा रहा है, जो सूर्य के घूर्णन, सूर्य की सक्रियता चक्र एवं सूर्य कलंकों के गुणों की जानकारी में अमूल्य योगदान दे रहे हैं।

मद्रास और कलकत्ता वेधशालाओं के बाद भारत में कुछ अन्य खगोलीय वेधशालाओं के लिए भी प्रयास किये गये। नवाब नसीरुद्दीन हैदर (1827–37) ने लखनऊ वेधशाला की स्थापना की, जिसका नियंत्रण एक ब्रिटिश वैज्ञानिक के हाथों में सौंपा गया, पर इसे 1849 में बंद कर दिया गया, और 1857 के ग़दर के समय यह पूरी तरह नष्ट हो गयी। महाराजा राजावर्मा (1813–1847) ने तिरुवनंतपुरम वेधशाला, त्रावणकोर की स्थापना 1837 में की, लेकिन 1852 में यह भी बंद हो गयी। 1882 में पारसी भौतिकविज्ञानी, के.डी. नायगांववाला के प्रयासों और भावनगर के महाराजा के अनुदान से तखतसिंहजी वेधशाला, पुणे में प्रमुख स्पेक्ट्रोस्कोपी वेधशाला के रूप में कार्यरत हुई, जिसका प्रयोग 1898 के सूर्यग्रहण के दौरान सौर वर्णमण्डल और कोरोना की स्पेक्ट्रोस्कोपीय अवलोकन, ओरियन नेबुला और सूर्य–कलंक समूहों के स्पेक्ट्रोस्कोपी अध्ययन के लिए भी किया गया। परन्तु दुर्भाग्यवश 1912 में नायगांववाला की सेवानिवृत्ति के बाद यह वेधशाला भी बंद हो गयी, और यहाँ से सभी यंत्र, विशेषकर 20 इंच भावनगर दूरबीन, कोडाइकनाल वेधशाला स्थानांतरित कर दिए गए। इसी प्रकार 1901 में हैदराबाद के नवाब जफर जंग ने उस्मानिया विश्वविद्यालय के अंतर्गत बेगमपेट में निज़ामिया

वेधशाला का प्रारम्भ किया, जो आज भी खगोल विज्ञान के विद्यार्थियों के प्रशिक्षण के उपयोग में कार्यरत है । परन्तु ये कहना होगा कि 20 वीं शताब्दी के प्रथम अर्द्ध तक भारत में खगोलविज्ञान का प्रतिनिधित्व मुख्य रूप से ब्रिटिश सरकार के कोडाइकनाल वेधशाला द्वारा ही किया गया।

स्वतंत्रता के बाद भारत में खगोल विज्ञान का नया युग प्रारम्भ हुआ। कोडाईकनाल वेधशाला को सरकार की ओर से नए सिरे से प्रोत्साहन और समर्थन मिला। 1958 में प्रोफेसर एम.के.वी. बप्पू (1927–1982) ने इसे आधुनिक स्वरुप दिया, और सोलर टनल टेलिस्कोप की स्थापना की । अंतरराष्ट्रीय भू–भौतिकीय वर्ष 1959 के दौरान सौर अध्ययन के लिए नए उपकरण प्राप्त किये गए। उत्तर प्रदेश राजकीय वेधशाला (UPSO) पहले 1954 में वाराणसी में स्थापित की गयी, जिसे बाद में नैनीताल स्थानांतरित कर दिया गया। पिछले कुछ वर्षों में भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद, टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, मुंबई, भारतीय खगोल विज्ञान संस्थान, बंगलौर, अन्तर्विश्वविद्यालय खगोल विज्ञान एवं खगोल भौतिकी केंद्र, पुणे, आदि के अंतर्गत कई महत्वपूर्ण सुविधाएं बनाई गयी हैं। इन संस्थाओं में भी सूर्य के शोध और अध्ययन के लिए गतिविधियां संचालित होती हैं ।

सूर्य के विशिष्ट गहन अध्ययन के लिए भारत में कोडाईकनाल वेधशाला के अतिरिक्त एक अत्याधुनिक वेधशाला की कमी लम्बे समय से महसूस की जा रही थी। परन्तु इस के लिए आधुनिक सौर उपकरणों और एक उपयुक्त स्थल की आवश्यकता थी। 1971 में कैलिफोर्निया (अमेरिका) के प्रसिद्ध बिगबेयर सौर वेधशाला (BBSO) के संस्थापकों में से एक 36 वर्षीय युवा भारतीय वैज्ञानिक डॉ. अरविन्द भटनागर भारत में भी इस तरह की वेधशाला की कल्पना कर रहे थे। भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद के उस समय के वैज्ञानिकों द्वारा सूर्य के अध्ययन का मुख्य आधार आयनमंडलीय और रेडियो खगोलविज्ञान के क्षेत्र में शोध कार्यक्रमों में उपयोगिता माना जाता था। भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला के प्रोफेसर भोंसले एवं रस्तोगी की प्रेरणा एवं वेधशाला ट्रस्ट, अहमदाबाद, जिसके अध्यक्ष भारत के तत्कालीन उप–प्रधान मंत्री श्री मोरारजी देसाई थे, से नियुक्तिपत्र के साथ अरविन्द ने भारत लौट कर गुजरात एवं राजस्थान में सर्वेक्षण कार्यक्रम प्रारम्भ किया। भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला के प्रो. रामनाथन ने भी भारत में उच्च–क्षमता के सौर टेलिस्कोप के स्थापना के प्रयास को पूरा समर्थन दिया।

डॉ. अरविन्द भटनागर ने बिग बेयर के अनुभव से तय किया कि सूर्य के उच्च गुणात्मक प्रेक्षण के लिए झील स्थित स्थानों को प्राथमिकता दी जाएगी। राजस्थान का चयन सर्वेक्षण के लिए प्रमुखता से किया गया क्योंकि इस प्रदेश में औसतन कम वार्षिक वर्षा, बिना बादलों के अधिक दिनों की उपलब्धता, अच्छे गुणवत्ता के सौर "दृष्टि" के लिए बड़े झीलों की उपलब्धता आदि कारणों से किया गया। और गहन सर्वेक्षण के बाद उदयपुर स्थित फतेहसागर झील के मध्य एक टापू को सौर वेधशाला की स्थापना के लिए 1973–74 में चुन लिया गया। बाद में सूखी और पानी से लबालब भरी झील की स्थिति में प्राप्त आंकड़ों की तुलनात्मक अध्ययन से पानी से घिरे स्थान से सूर्य के अवलोकन में गुणवत्ता सुधार की पुष्टि हुई।

इस टापू पर प्रथम टेलिस्कोप ऑस्ट्रेलियन सहयोगी सौरविद् रोनाल्ड जिऑवनेली के सौजन्य से 1974 में प्राप्त 10–फुट सौर स्पार की स्थापना थी, जो अंतरराष्ट्रीय सहयोग का परिणाम था। इस टेलिस्कोप के लिए 150–मिमी. मुख्य लेंस विलियम लिविंग्स्टन, किटपीक वेधशाला संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से, एच–अल्फ़ा फ़िल्टर लॉकहीड वेधशाला, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के हैरी रैमजे से, 35–मिमी. समय–अंतराल कैमरा और मोटर पेसिडिना एवं हॉलीवुड की कबाड़ी दुकानों से, स्वचालित सौर–गाइडर कैलटेक सौर–अभियांत्रिकी के जॉन काउली से प्राप्त किये गए, और 150–मिमी. लेंस के दो टेलिस्कोप व्हाइट–लाइट और एच–अल्फा के समकालिक प्रेक्षणों के लिए परिचालित कर लिए गए।

वेधशाला ट्रस्ट, अहमदाबाद, के तत्वावधान में फतेहसागर झील के समीप स्थित एक आवासीय इमारत (11 विद्यामार्ग, देवाली) में वेधशाला के कार्यालय एवं प्रयोगशाला का प्रारम्भ हुआ। इसरो, डी. एस. टी., सी. एस. आई. आर., आदि संस्थानों के आर्थिक सहयोग से इस वेधशाला के मूलभूत सुविधाओं का विकास किया गया, जबकि वेधशाला ट्रस्ट, अहमदाबाद, के द्वारा कुछ कर्मचारियों के मासिक पारिश्रमिक की व्यवस्था की गयी। इस वेधशाला का उद्घाटन राजस्थान और गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री द्वय श्री

हरिदेव जोशी एवं बाबूभाई पटेल द्वारा 20 सितम्बर 1975 को किया गया, जिसमे वेधशाला को सोलर स्पार टेलिस्कोप प्रदान करने वाले डॉ. जिओवनेली के साथ प्रोफेसर एम.के. वेणुबप्पु, प्रो. रामनाथन एवं वेधशाला, अहमदाबाद के ट्रस्टी भी उपस्थित थे।

दिसंबर 1975 से वेधशाला से नियमित सौर अवलोकन अभियान प्रारम्भ कर दिया गया। इस वेधशाला के मुख्य वैज्ञानिक उद्देश्य सौर विस्फोटो (flare) के लिए आवश्यक ऊर्जा के भंडारण और अकस्मात उत्पादन की प्रकृति का कम समय–अंतराल से सूक्ष्म अध्ययन था। भारत स्थित यह वेधशाला जापान और यूरोप के मध्य एक बड़े देशांश (longitudinal) अंतराल को मिटाने में सहायक मानी गयी। यहाँ से प्राप्त उच्च गुणवत्ता के सौर प्रेक्षण के कारण सहयोगियों ने इसे "बिग बेयर ईस्ट" नाम दिया।

उदयपुर द्वीप वेधशाला से प्राप्त प्रारंभिक परिणामों की विवेचना के लिए दुनिया भर से प्रमुख सौर खगोलविद उदयपुर में प्रथम इंडो–अमेरिकन कार्यशाला 12–16 जून 1979 के समय एकत्र हुए। 1980 तक इस वेधशाला का संचालन वेधशाला ट्रस्ट, अहमदाबाद द्वारा किया जाता रहा, परन्तु उसके बाद ट्रस्ट द्वारा वित्तीय समर्थन जारी रखने की असमर्थता व्यक्त करने के बाद अंततः दिसंबर 1981 में उदयपुर सौर वेधशाला का अधिग्रहण अंतरिक्ष विभाग द्वारा कर लिया गया, और इसकी प्रशासनिक जिम्मेदारी भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला को सौंप दी गई। इसके अंतर्गत वेधशाला निदेशक के साथ 1 वैज्ञानिक, एवं 10 तकनीकी और सहायक कर्मचारियों के छोटे कार्मिक दल के लिए अनुमोदन दिया गया।

सोलर स्पार टेलिस्कोप की स्थापना, और यहाँ से किये गए सौर अवलोकनों की उच्च गुणवत्ता के कारण वेधशाला को NOAA, बोल्डर, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के सौजन्य से 1985 में एक 15–सेमी. राज़दो फुल डिस्क सौर टेलिस्कोप प्राप्त हुआ, जिसके ड्राइव और गाइडर वेधशाला की कार्यशाला में बनाये गए। तत्पश्चात, माउंट निमु, लेह साइट सर्वेक्षण में प्रयुक्त कार्ल जैइस टेलिस्कोप 1987 को उदयपुर लाया गया, जिसका उपयोग सौर वर्णक्रमदर्शी के विकास में किया गया। वेधशाला के स्थापना के बाद से कई महत्वपूर्ण मेहमानों ने इस सौर वेधशाला की निरीक्षण यात्रा की, जिनमें प्रमुख थे प्रसिद्द खगोलविद प्रोफेसर सुब्रमण्यम चंद्रशेखर, जो 1986 और फिर 1990 में आये।

1986 में सौर स्पार टेलिस्कोप को रोलिंग शेड से नए टावर/डोम में स्थानांतरित किया गया और राज़दो टेलिस्कोप को टापू पर लगाया गया। फतेहसागर के उत्तरी छोर पर सौर वेधशाला के परिसर के उपयुक्त विकास के लिए बड़ी रोड स्थित पहाड़ी भूमि का अधिग्रहण 1986 में किया गया, जिस पर अंतरिक्ष विभाग के अध्यक्ष प्रो. यू. आर. राव द्वारा मुख्य परिसर का शिलान्यास 1992 में किया गया। 1995 में मुख्य कार्यालय भवन परिसर का निर्माण पूर्ण हुआ, और 11 विद्या मार्ग स्थित अस्थायी परिसर से इस उपयुक्त परिसर में प्रयोगशाला स्थानांतरित कर दिया गया। इसी प्रकार, कर्मचारियों के आवास परिसर के विकास के लिए मुख्य परिसर से 3 किमी दूरी पर भूमि अधिग्रहण किया गया, जहाँ पर शिलान्यास P.R.L. के तत्कालीन निदेशक प्रो. जी. एस. अग्रवाल द्वारा 2003 में किया गया।

1962 में "पांच मिनट अवधि" के सौरदोलनों की खोज के बाद सूर्य की आतंरिक संरचना की जानकारी के लिए इनकी उपयोगिता का महत्व सामने आया। अब तक सूर्य की आंतरिक संरचना और गतिविधियों की अप्रत्यक्ष जानकारी सौर वैज्ञानिकों को गणितीय पद्धति और सूर्य के केंद्र में उत्पन्न न्युट्रीनो के अध्ययन के द्वारा ही संभव थी। इन दोलनों की सूक्ष्मता और शुद्धता से परिमापन के लिए कई दिनों से लेकर महीनों तक सूर्य के लगातार 24 घंटे वैज्ञानिक अवलोकनों की आवश्यकता होती है, जो दिन–रात के चक्र के कारण पृथ्वी के सतह पर स्थित किसी एक सौर वेधशाला द्वारा संभव नहीं, परन्तु धरातल पर विभिन्न अंतराल स्थित वेधशालाओं के अंतर्राष्ट्रीय तंत्र समूह द्वारा संभव है। इसके अतिरिक्त, अंतरिक्ष में उपयुक्त स्थान पर स्थापित उपग्रहों के द्वारा भी सूर्य का लगातार अन्वेषण किया जा सकता है।

उदयपुर सौर वेधशाला को 1986 के मध्य सौरदोलनों की उच्च परिशुद्धता से मापन के शोध के कई प्रस्ताव मिले, जिसके अंतर्गत सूर्य के निरंतर अवलोकन के लिए विश्व में अलग–अलग योजनाओं पर विचार किया गया। विशेषकर राष्ट्रीय सौर वेधशाला, टूसों, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के डॉ. जॉन लाइबाकर द्वारा जिन्होंने एक अंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम ''गोंग'' का प्रस्ताव रखा। 1987 में यू. एस. ए. के राजदूत जॉन गुंथर डीन इस प्रस्ताव के औपचारिक विचार–विमर्श के लिए

पी. आर. एल. आये और साइट सर्वेक्षण के लिए विश्व के 20 सम्भावित स्थानों में उदयपुर सौर वेधशाला (Udaipur Solar Observatory (U.S.O.) का चयन करने के लिए प्रस्ताव रखा। कई वर्षों के सर्वेक्षण के बाद अक्टूबर 1993 में उदयपुर सौर वेधशाला का अंतरराष्ट्रीय "गोंग" परियोजना में विश्व के छः वेधशालाओं में चयन एक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। इसके अंतर्गत सूर्य की गति–चित्रों के निरंतर (दिन–रात) समय–श्रृंखला प्राप्त करने के लिए छह संवेदनशील केन्द्रों का विश्वव्यापी नेटवर्क 1994–95 में स्थापित किया गया, जिसकी सहायता से "पांच मिनट अवधि" के सौरदोलनों की उच्च परिशुद्धता से मापन संभव हो सका है। यह नेटवर्क 7 मई 1995 से निरंतर कार्यरत है, और उदयपुर सौर वेधशाला इसमें महत्वपूर्ण कड़ी है।

वेधशाला ने सूर्य के विस्फोटक प्रक्रियाओं के लिए प्रभामण्डलीय चुंबकत्व के महत्व के कारण इसके मापन के लिए 1992–96 के मध्य सौर विडिओ मैग्नेटोग्राफ को वेधशाला में विकसित और निर्मित किया जो एक नया आयाम था। विडियो मैग्नेटोग्राफ की सफलता के बाद वेधशाला ने चुंबकीय क्षेत्र के अनुदैर्ध्य घटक के मापन के लिए 2007 में सौर वेक्टर मैग्नेटोग्राफ उपकरण का निर्माण भी कर लिया, जिसके द्वारा चुम्बकीय क्षेत्र के सभी घटकों का मापन किया जा सकता है।

हाल के वर्षों में वेधशाला ने 50 सेमी एपर्चर के एक आधुनिक बहु–उपयोगिता सौर टेलीस्कोप (मल्टी–एप्लीकेशन सोलर टेलिस्कोप, "मास्ट") स्थापित किया है, जो 2015 से संचालित किया जा रहा है। यह वेधशाला के वैज्ञानिकों द्वारा डिजाइन और निर्देशों के अनुसार बेल्जियम में उन्नत यांत्रिक और ऑप्टिकल प्रणाली (अमोस) द्वारा निर्मित किया गया है। यह एशिया में अपनी श्रेणी का सबसे उन्नत सौर टेलिस्कोप है, और अगले कई वर्षों के लिए भारतीय सौर वैज्ञानिक लक्ष्यों को पूरा करने में मदद करेगा।

सौर अवलोकन के लिए पारंपरिक गुंबद अनुपयुक्त पाया गया है, क्योंकि गुंबद के अंदर ताप द्वारा हवा में स्थानीय अशांति उत्पन्न हो जाती है। इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए "मास्ट" के लिए खुले गुम्बद का डिजाइन भी वेधशाला में तैयार किया गया, और इस नए टेलिस्कोप को इसके अंदर स्थापित किया गया है। धरातल–स्थित सौर अवलोकन वायुमंडलीय अशांति एवं विक्षोभ से प्रभावित और विकृत हो जाते हैं, जिसका सुधार बड़े एपर्चर के दूरबीनों के साथ सक्रिय और अनुकूल प्रकाशिकी तकनीक से किया जा सकता है। वेधशाला उच्च गुणवत्ता सौर इमेजिंग के लिए बहु–उपयोगी सौर टेलीस्कोप, "मास्ट" के साथ संयोजन के उद्देश्य से एक आधुनिक सक्रिय और अनुकूल प्रयोगशाला स्थापित करने में लगी है।

भविष्य की भारतीय सौर परियोजनाएं में मुख्य है अंतरिक्ष मिशन आदित्य एल–1 । यह सौर कोरोना के अध्ययन के लिए भारत की पहली पूर्णतया सौर–समर्पित अंतरिक्ष परियोजना है, जिस पर उदयपुर वेधशाला के वैज्ञानिक भारतीय खगोलभौतिकी संस्थान, बंगलुरु, इसरो उपग्रह केंद्र, आदि के सहयोगियों के साथ मिल कर काम कर रहे हैं। इसका उद्देश्य कोरोना के गतिशील प्रकृति एवं कोरोनल मास इजेक्शन (CME) के अध्ययन, अंतरिक्ष मौसम, पृथ्वी के चुम्बकीय मंडल, आयनमंडल, और वायुमंडल को प्रभावित करने वाले कारणो के विश्लेषण के लिए होगा। इस तरह, आने वाले वर्ष भारतीय सौर वैज्ञानिकों एवं विशेषकर वेधशाला के लिए बहुत महत्व और संभावनाओं से परिपूर्ण होंगे।

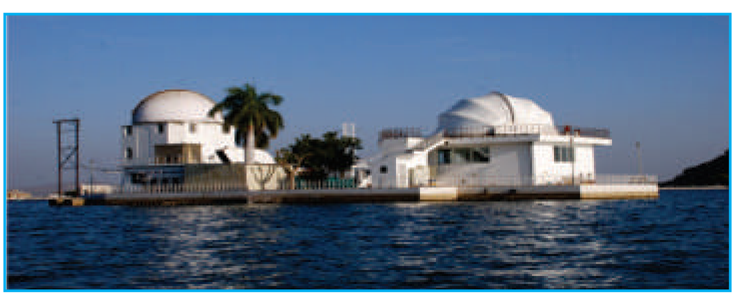

उदयपुर सौर वेधशाला, उदयपुर

क्वान्टम भौतिकी (ब्रह्माण्ड तथा भौतिक जगत एवं उसकी प्रक्रियाओं की मानव समझ को नयी अंतर्दृष्टि प्रदान करने वाला विज्ञान

अखिलेश
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

यदि आपसे यह कहा जाये कि ब्रह्माण्ड एवं भौतिक जगत के बारे में विज्ञान के दृष्टिकोण से हमारी अब तक की समझ पूर्णतया गलत एवं भ्रामक है, तो आपकी प्रतिक्रिया क्या होगी ? निश्चित ही आप या तो इस बात को सिरे से नकार देंगे या फिर आपके मन में स्वाभाविक सा प्रश्न उठेगा कि 'भौतिक जगत' जैसे आधारभूत विषय के सम्बन्ध में हमारी सोच कैसे गलत हो सकती है?

लेख के आरंभ में ही स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि क्वान्टम भौतिकी मुख्य रूप से परमाणुओं के सूक्ष्म जगत से सम्बद्ध है और चूंकि स्थूल जगत (या भौतिक जगत) परमाणुओं एवं अणुओं से ही मिलकर बना है, इसलिए क्वान्टम भौतिकी के गूढ़ ज्ञान की समझ हमारी भौतिक जगत की समझ को विकसित एवं परिष्कृत करती है। यह कथन अतिश्योक्ति न होगा कि क्वान्टम भौतिकी के नियम समग्र ब्रह्माण्ड के प्रत्येक परमाणु को चालित एवं नियंत्रित करते हैं। 'क्वान्टम जगत' मानव–समझ के अनुसार काफी विचित्र है। यहाँ कणों (अर्थात परमाणुओं) को ना तो किसी एक विशेष स्थान में बंधकर रहना पसंद है और ना ही किसी एक निर्धारित प्रक्षेप–पथ या कक्षा का अनुसरण करना पसंद है।

यहाँ यह बताना सार्थक रहेगा कि क्वान्टम भौतिकी के प्रादुर्भाव से पूर्व हम भौतिक जगत को कुछ तय नियमों के अनुसार बंधा हुआ और उन्हीं नियमों से तय होने वाला समझते थे। इन 'तय नियमों' को वैज्ञानिक भाषा में हम क्लासिकल भौतिकी के नाम से जानते थे। स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि क्लासिकल भौतिकी की एक विशेषता थी 'निश्चितता'। उदाहरण के तौर पर, क्लासिकल भौतिकी के अनुसार हम (गतिमान) वस्तुओं की गति, दिशा, प्रक्षेप–पथ तथा कक्षा जैसे कई पैरामीटरों का कुछ निर्धारित समीकरणों के अनुसार निश्चितता के साथ पूर्वानुमान लगा सकते हैं। सरल शब्दों में कहूँ तो क्लासिकल भौतिकी हमें वस्तुओं की गतिविधियों को निश्चितता के साथ चिन्हित करने में समर्थ बनाती है।

$$F = \frac{G\ m_1\ m_2}{r^2}$$

तथा

$$R = \frac{v^2\ \sin2\theta}{g}$$

जैसे समीकरण इसका सटीक उदाहरण हैं। इसके उलट क्वान्टम भौतिकी निश्चितता की बात न करते हुए केवल और केवल संभावनाओं पर आधारित है।

तो प्रश्न यह उठता है कि इन विचित्र से लगने वाले नियमों को (जिन्होंने कि भौतिक जगत के बारे में हमारी सारी समझ को उलट कर रख दिया) हमने कैसे खोजा ? इसका श्रेय नील्स बोहर नाम के भौतिक विज्ञानी को दिया जा सकता है। बोहर ने प्रतिपादित किया था कि पदार्थ के भीतर इलैक्ट्रॉन न्यूक्लियस के इर्द–गिर्द कक्षाओं में घूमते हैं किन्तु उन्हें किसी भी कक्षा में घूमने की आज़ादी नहीं है बल्कि वे कुछ निर्धारित कक्षाओं में ही घूम सकते हैं। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि किसी भी परमाणु का तापमान बढ़ाने पर उसके भीतर विद्यमान इलैक्ट्रॉन अतिरिक्त ऊर्जा प्राप्त होने के कारण एक निर्धारित कक्षा से दूसरी (उच्च) निर्धारित कक्षा में छलांग लगाते हैं। इसी प्रकार, किसी भी उच्च कक्षा से निम्न कक्षा में आने के दौरान इलैक्ट्रॉन (एक निश्चित तरंगदैर्ध्य के) प्रकाश के रूप में ऊर्जा उत्सर्जित करते हैं।

इलैक्ट्रॉन की इसी प्रकार की छलांग से अंग्रेज़ी भाषा का 'क्वांटम लीप' कथन निकाला है।

आप सब सोच रहे होंगे कि इसमें खास बात क्या है? यह सब तो हम सभी ने विद्यालय में पढ़ा हुआ है।

सभी को बता दूँ कि 'क्वांटम लीप' में खास बात यह होती है कि उसमें ऐसा प्रतीत होता है कि इलैक्ट्रॉन निम्न कक्षा से उच्च कक्षा में (या उच्च कक्षा से निम्न कक्षा में) जाते समय दोनों के बीच के खाली स्थान से गुज़रता ही नहीं, मानो तत्क्षण ही इलैक्ट्रॉन निम्न कक्षा से गायब होकर उच्च कक्षा में प्रकट हो जाता हो।

क्वान्टम भौतिकी को और अधिक बल मिला 'क्वांटम डबल स्लिट प्रयोग' से, जिसके पश्चात भौतिक विज्ञानियों ने यह बताया कि एक इलैक्ट्रॉन केवल एक कण ना होकर एक तरंग भी है। इस सिद्धान्त को 'तरंग परमाणु द्विविधता' का नाम दिया गया। इस सिद्धान्त से कई भौतिक विज्ञानी भौंचक्के रह गए और भौतिक विज्ञान के जगत में इसको लेकर एक बहस छिड़ गयी।

कुछ समय बाद इरविन श्रोडिंगर नामक भौतिक विज्ञानी ने एक समीकरण प्रस्तुत किया जिससे इस बात को बल मिला कि एक गतिमान इलैक्ट्रॉन चलते समय एक लहर की तरह स्थान में फैल जाता है।

अंततः मैक्स बोर्न नाम के एक भौतिक विज्ञानी ने प्रतिपादित किया कि एक गतिमान इलैक्ट्रॉन ना ही एक कण है और ना ही एक तरंग है और ना ही दोनों है बल्कि वह स्वयं में एक 'संभावानाओं की लहर' है। उनके अनुसार श्रोडिंगर के समीकरणों द्वारा परिभाषित होने वाली लहर का किसी भी स्थान पर आकार, इलैक्ट्रॉन के उस स्थान पर विद्यमान होने की संभावना को दर्शाता है न कि इलैक्ट्रॉन के उस स्थान पर पाये जाने कि निश्चितता को।

इससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि इलैक्ट्रॉन स्वयं में संभावानाओं का सागर है और यह प्रश्न कि किसी निर्धारित क्षण में इलैकट्रॉन किस स्थान में विद्यमान है और होगा मौलिक रूप से गलत है। सार्थक/सही प्रश्न यह होना चाहिए कि यदि हम किसी निर्धारित स्थान पर किसी इलैक्ट्रॉन को खोजें तो उसके वहाँ होने की क्या/कितनी संभावना है?

एक ऐसे भौतिक जगत की कल्पना कर पाना सहज नही है जो कि संभावानाओं से परिपूर्ण है और जहां निश्चित कुछ भी न हो। आज तक के सबसे विख्यात एवं सम्मानित भौतिक विज्ञानी अल्बर्ट आइन्स्टीन भी सहज रूप से यह कल्पना नहीं कर पा रहे थे और आइन्स्टीन की इसी असमर्थता ने उन्हें वैचारिक रूप से नील्स बोहर के विरुद्ध लाकर खड़ा कर दिया।

नील्स बोहर के अनुसार मापने की प्रक्रिया सब कुछ बदल देती है। उनका कहना था कि किसी भी कण (इलैक्ट्रॉन) का अवलोकन या मापन करने से पूर्व उसकी विशेषताएं अनिश्चित होती हैं और जिस क्षण हम उसकी विशेषताओं को मापते हैं या उनका अवलोकन करते हैं, उसी क्षण उन विशेषताओं से जुड़ी सभी अनिश्चितताएं खत्म या गायब हो जाती हैं। सरल शब्दों में कहें तो मापने या अवलोकन करने की प्रक्रिया ही किसी भी कण को अपनी अनिश्चितताएं त्यागने पर विवश करती है।

इसके विपरीत आइन्स्टीन का कहना था कि सब कुछ निश्चित है, न केवल मापन या अवलोकन के क्षण पर बल्कि हर समय। उनका मत था कि चाहे मैं चंद्रमा (जो कि भौतिक जगत का ही हिस्सा है और इलैक्ट्रॉनों तथा परमाणुओं से ही बना है) की तरफ देखूँ या ना देखूँ, वह हर क्षण, हर समय आकाश में विद्यामान है और रहेगा। वे क्वान्टम भौतिकी को गलत नहीं मान रहे थे बल्कि अधूरा बता रहे थे।

आइन्स्टीन के तर्कों को ना मानते हुए नील्स बोहर क्वान्टम भौतिकी एवं भौतिक जगत को संभावनाओं का सागर ही मानते रहे जहाँ कुछ भी निश्चित नहीं है।

फिर सन 1935 में क्वांटम बद्धता नामक एक सिद्धान्त सामने आया जिसके अनुसार दो कण आपस में बद्ध हो जाते हैं/हो सकते हैं, यदि उनकी विशेषताएं आपस में सम्बद्ध हो जाएँ। यहां यह समझना ज़रूरी है कि क्वांटम बद्धता में दो बद्ध कणों के बीच किसी भी प्रकार का कोई भौतिक संपर्क नहीं होता। बद्ध कणों के सन्दर्भ में क्वान्टम भौतिकी ने दो महत्त्वपूर्ण बातें कहीं :—

1) क्वान्टम भौतिकी के अनुसार दो बद्ध कणों के बीच की दूरी कोई मायने नहीं रखती अर्थात दो बद्ध कण आपस में बद्ध ही रहेंगे चाहे उन दोनों के बीच हजारों मील की दूरी भी क्यों न हो।

2) क्वान्टम भौतिकी के अनुसार दो बद्ध कणों में से किसी एक कण की किसी भी विशेषता को मापने से दूसरे बद्ध कण की वह विशेषता प्रभावित होती है,

फिर चाहे वो दोनों बद्ध कण एक दूसरे से कितनी ही दूर क्यों न हों।

इस बार भी आइन्सटीन इन दोनों ही बातों को मानने के लिए तैयार नहीं हुए। बद्ध कणों के अस्तित्व को तो उन्होंने माना लेकिन उनके बद्ध होने के पीछे और किसी एक कण की विशेषता के मापन के कारण दूसरे कण की विशेषता पर प्रभाव पड़ने के पीछे का कारण उन्होंने बहुत ही सरल तरीके से व्यक्त करने की कोशिश की। उनका मानना था कि दो बद्ध कण दस्तानों के जोड़े की तरह हैं जो हमेशा ही एक दूसरे के उलट होंगे। यदि किसी व्यक्ति के पास दाहिने हाथ का दस्ताना है और कोई दूसरा व्यक्ति उससे मीलों दूर है और दूसरा दस्ताना उस दूसरे व्यक्ति के पास है तो यह बात निश्चित है कि दूसरे व्यक्ति के पास बाएं हाथ का ही दस्ताना होगा और यह निर्धारण उसी समय तय हो गया था जब दोनों दस्तानों को अलग किया गया।

दुर्भाग्यवश, सन 1955 में आइन्सटीन का निधन हो गया और वे इसी विचार के साथ दुनिया से चले गए कि क्वान्टम भौतिकी भौतिक जगत का अधूरा दृश्य पेश करती है।

फिर सन 1967 में जॉन क्लासर नामक एक व्यक्ति ने एक ऐसी मशीन बनाई जो हज़ारों बद्ध कणों को मापने में सक्षम थी और उनके घुमाव की आपस में तुलना करने में सक्षम थी। इस मशीन से प्राप्त परिणामों से सिद्ध हो गया की क्वांटम बद्धता विद्यमान है और दो बद्ध कणों में से किसी एक की किसी भी विशेषता को मापने से दूसरे बद्ध कण की वो विशेषता प्रभावित होती है, फिर चाहे वो दोनों बद्ध कण एक दूसरे से कितनी ही दूर क्यों न हों। संक्षेप में कहें तो क्वान्टम भौतिकी को लेकर नील्स बोहर की अवधारणा एवं सिद्धांत सही साबित हुए।

अंततः प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि यदि हम यह मान लें कि सूक्ष्म कणों के बीच क्वांटम बद्धता होती है, तो क्या हम इसका कोई सार्थक उपयोग कर सकते हैं?

उत्तर है, हाँ।

कैसे?

यह बात सर्व–विदित है कि मानव की सदैव ही आकांक्षा रही है कि वो मीलों की दूरी जल्द से जल्द तय कर पाए और हो सके तो दो स्थानों के बीच की भौतिक दूरी को तय किये बिना ही एक स्थान से दूसरे स्थान पहुँच जाए। ऐसा लगता है कि क्वान्टम भौतिकी के क्वांटम बद्धता के सिद्धांत का उपयोग करके वैज्ञानिक मानव के इस स्वप्न को भी साकार कर देंगे। वैज्ञानिक भाषा में इस प्रक्रिया को टेलीपोर्टेशन का नाम दिया गया है और क्वान्टम विज्ञानियों ने सूक्ष्म कणों को टैलीपोर्ट करने में सफलता प्राप्त कर ली है और इस बात की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता कि निकट भविष्य में क्वान्टम विज्ञानी मानवों को भी सफलतापूर्वक टैलीपोर्ट कर सकेंगे। इसके अलावा क्वान्टम कंप्यूटर का भी आविष्कार क्वान्टम विज्ञानियों ने कर लिया है और जिस दिन क्वान्टम कंप्यूटर पूर्ण रूप से विकसित होकर जन साधारण के उपयोग में आने लगेंगे उस दिन कंप्यूटर–जगत में यह हमारी एक अभूतपूर्व सफलता मानी जायेगी।

पृथ्वी दिवसः औचित्य, वैज्ञानिक एवं जनपक्षीय आधार

डा. पी.एस. नेगी
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

वर्ष 1970 से भारत सहित विश्व के अनेक देशों में प्रतिवर्ष 2 अप्रैल को "पृथ्वी दिवस" मनाया जाता है। पृथ्वी दिवस का आयोजन पृथ्वी के पर्यावरण बचाने हेतु वैश्विक सामाजिक सरोकारों के अर्न्तगत चिन्तन, मनन व जनजागरण हेतु सराहनीय प्रयास है। यद्यपि सम्पूर्ण विश्व मे इस आयोजन में समाज के सभी वर्गो द्वारा जैसे वैज्ञानिकों, समाज सुधारकों, अध्यापकों, छात्र–छात्राओं, भूतपूर्व कर्मचारियों व आम जनमानस द्वारा भागीदारी निभाई जाती है। किन्तु यक्ष प्रश्न यह है कि आखिर ऐसी स्थिति क्यों आई ? सदियों से जीव जगत संसार की पालनकर्ता अपनी ही धरती माता आज हमारे जीवन यापन हेतु असमर्थ हो गई है। फलस्वरूप धरती का मौलिक स्वरूप वापस लाने व उसके संरक्षण के लिये हमें पृथ्वी दिवस मनाना पड़ रहा है।

वस्तुतः पृथ्वी पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल, जंगल, जमीन व वातावरण को इंसान ने अपने लालची व गैर वैज्ञानिक कार्यकलापों से प्रदूषित कर इस हद तक अनुपयोगी बना दिया है कि खुद का भविष्य असुरक्षित हो गया है । इसलिए अपना भविष्य सुरक्षित करने कि लिये विश्व के विभिन्न देशों द्वारा "पृथ्वी दिवस" का आयोजन कर इंसान के जिन्दा रहने की मुहिम चलाई जा रही है।

जल संसाधन : पृथ्वी पर उपलब्ध मौलिक संसाधनों में जल सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन माना जाता है। किन्तु अदूरदर्शी मानवीय गतिविधियों से अधिकांश जलस्रोत जैसे नदी, नाले, झरने यह तक कि भू–जल भी प्रदूषित हो गया है। हमारे उच्च शिखरीय हिमालयी क्षेत्रो में बर्फ व ग्लेशियरों के रूप में स्थित पानी के भण्डार भी वातावरण की चपेट में आ गये है। हिमालय की सुरम्य घाटियों एवं चोटियों में अब वायु प्रदूषण के साथ "ब्लैक कार्बन" नामक प्रदूषण ने भी अपनी पहुंच बना ली है।

गंगा नदी के उद्‌गम स्थल के निकट वाडिया संस्थान द्वारा स्थापित केन्द्र (चित्र 2) स्पष्ट दर्शाता है कि गर्मियों के महीने में बायोमास बर्निंग का स्तर 1899 नैनोग्राम प्रतिघन मीटर तथा तात्विक ब्लैक कार्बन 1180 नैनोग्राम प्रतिघन मीटर तक पहुंच जाता है। उक्त स्थल पर ब्लैक कार्बन का महीनेवार वितरण देखने से ज्ञात होता है कि गर्मियों के महीने विशेष कर अप्रैल, मई व जून में वातावरण मे सांध्रता बढ़ जाती है (चित्र–3)। वातावरण में स्थित ब्लैक कार्बन सूर्य की उष्मा को अपने आप में सोख लेता है एवं पुनः अदृश्य इनफ्ररारेड के रूप मे उत्सर्जित करता है। जिससे सम्पूर्ण वातावरण का तापमान बढ़ जाता है। हिमालय के पारिस्थतिकीय तंत्र में ब्लैक कार्बन की बढ़ती मात्रा के कारण वातावरण

चित्र–1 : एशिया वाटर टावर का हिस्सा डोकिरियानी ग्लेशियर

चित्र–2 : वाडिया संस्थान का ब्लैक कार्बन मापक केंद्र

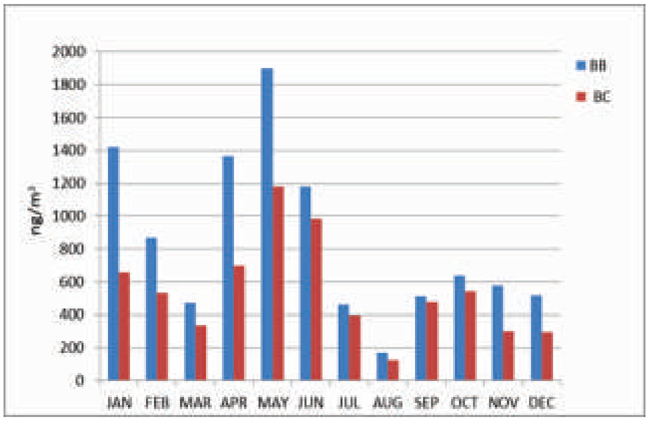

चित्र–3 : ब्लैक कार्बन का मासिक वितरण

अनुपातिक रूप से अधिक गर्म हो जाता है जिसका सीधा प्रभाव जलवायु परिवर्तन के कारण वहाँ स्थित बर्फीले क्षेत्रों, हिमनदों व स्वच्छ वातावरण में उगने वाले पेड़ पौधों तथा वहाँ विचरण करने वाले जीव–जन्तुओं एवं पौधों पर भी पड़ रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण बर्फ रेखा व वृक्ष रेखा के लगातार ऊपर की ओर खिसकने से भी यह पारिस्थतिकी सूचक के रूप में दर्ज हो जाता है। (चित्र–04)

जल प्रदूषण : प्रदूषण के कारण पारिस्थतिकी तंत्र उच्च शिखरीय क्षेत्रो में ही नही बल्कि मध्य हिमालय व बाह्य हिमालय में प्रवाहित नदी, नालों, झरनों व अन्य जल स्रोतों को भी प्रभावित कर रहा है। भारतवर्ष की सबसे महत्वपूर्ण एवं पवित्र माने जाने वाली गंगा नदी भी प्रदूषण के चपेट मे आ चुकी है। हमारे प्राचीन धर्म ग्रन्थों में गंगा का स्थान सर्वश्रेष्ठ है, क्योकि गंगा अपने जल संग्रहण क्षेत्र से लेकर गंगासागर की यात्रा तक लाखों लोगों का भरण–पोषण कर पारिस्थितिकी तंत्र को भी संरक्षण प्रदान करती है। भारतीय धर्म ग्रन्थ श्रीमद्भगवत गीता में श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं– ''मै नदियों में गंगा हूँ।'' धर्म ग्रन्थो के अनुसार ऐसा माना जाता है कि गंगा का उद्गम भगवान विष्णु के चरण कमल से हुआ है। एवं उसके पश्चात् गंगा भगवान शिव की जटाओं में समा गयी। राजा भगीरथ अपने तपोबल से गंगा को पृथ्वी पर ले आये थे। स्पष्ट है एक समय में पवित्र माने जानी वाली नदी आज अवैज्ञानिक गतिविधियों के कारण भयंकर प्रदूषण का शिकार हो चुकी है।

नदी के तट पर बसे शहरों की सभी प्रकार की गन्दगी गंगा में प्रवाहित की जा रही है। इसके कारण गंगा जल प्रदूषित होकर विभिन्न प्रकार के हानिकारक जीवाणुओं, फफूंद आदि का घर बन गया है। फलस्वरूप गंगाजल पर निर्भर रहने वाली भारतीय जनसंख्या का लगभग 40 प्रतिशत हैजा, उल्टी, दस्त, बुखार व अन्य पेट की बीमारियों से ग्रसित है। वैश्विक संस्था विश्व

चित्र–4 : हिमालयन ट्रिलाइन : जलवायु परिवर्तन सूचक

स्वास्थ्य संगठन ने भी गंगा नदी को तीन सौ गुना प्रदूषित मान कर विश्व की सबसे अधिक प्रदूषित नदियों में सम्मिलित कर दिया है। एक अध्ययन के अनुसार हरिद्वार में गंगाजल में कोलीफार्म नामक विषाक्त जीवाणु का स्तर 3500 पाया गया है, जबकि पेयजल का मानक 50 से नीचे तथा स्नान जल का मानक 500 के नीचे है। यहाँ तक कि पटना विश्वविद्यालय द्वारा बनारस के नजदीक गंगा जल में पारे होने की पुष्टि तक की है। सम्पूर्ण भारतीयों की आस्था व पवित्रता से जुड़ी गंगा नदी का इस स्तर पर प्रदूषित होना भारतीयों के लिये ही नही बल्कि विश्व के लिये चिन्ता का विषय है। भारतवर्ष में पृथ्वी दिवस के आयोजनो मे भी गंगा को प्रदूषण मुक्त करने का विषय सर्वोपरि रहता है।

पृथ्वी को बचाने हेतु सर्वप्रथम विश्व का ध्यान नदियों की तरफ ही जाता है। एक समय में लंदन की जैविक रूप से मृत पायः घोषित टेम्स नदी वैज्ञानिक प्रयासों के कारण आज विश्व की स्वच्छ नदियों में गिनी जाती है। जबकि वर्ष 1230 से 1860 तक टेम्स के विषैले पानी के कारण हजारो लोगों की मृत्यु हुयी थी। गंगा नदी को स्वच्छ करने हेतु भारत में कई बार प्रयास किये गये। वर्ष 1985 में "गंगा ऐक्शन प्लान" प्रारम्भ हुआ जिसने लगभग 1200 करोड़ रू0 खर्च हुये किन्तु कोई आशाजनक सफलता हाथ नही लगी। उक्त योजना की असफलता का मुख्य कारण गंगा के अविरल बहाव एवं उच्च शिखरीय क्षेत्रो में बर्फ व ग्लेशियरों का संरक्षण न कर सकना माना गया था। वर्तमान में "नमामि गंगा" नामक परियोजना के अर्न्तगत गंगा स्वच्छता अभियान चल रहा है। किन्तु एक तथ्य स्पष्ट है कि टेम्स नदी की तरह गंगा को स्वच्छ बनाने हेतु उसमे प्रवाहित गंदगी, कूड़ा–करकट पर पूर्णतः लगाम लगानी होगी। हालांकि भारत सरकार ने गंगा किनारे स्थित प्रदषूण फैलाने वाले 48 औद्योगिक इकाइयों को बन्द करने के आदेश पारित किये हैं।

यह भी कटु सत्य है कि गंगा को प्रदूषण मुक्त बनाने में लगे योजनाकारों का धरातलीय अनुभव सीमित होता है। अधिकांश योजनाओं का निर्माण ग्रामीण परिवेश से दूर हटकर वातानुकूलित भवनो मे किया जाता है। जिससे योजनाओं को धरातल पर उतारते समय व्यवहारिक कठिनाइयों को सामना करना पड़ता है। देहरादून की एक संस्था (हिमालय पर्यावरण अध्ययन एवं संरक्षण समिति) द्वारा वाडिया संस्थान के सहयोग से पृथ्वी दिवस का आयोजन एक अनूठे ढंग से पिलखन के पेड़ की छाँव में किया गया। जिससे योजनाकारो एवं भाग लेने वाले विद्यार्थियों व समाज सेवकों को धरातलीय अनुभव प्राप्त हुए (चित्र–05)।

चित्र–5 : पिलखन पेड़ की छांव में पृथ्वी दिवस आयोजन

वन विनाश : प्राणी जगत को सांस लेने हेतु प्राण वायु आक्सीजन प्रदान करने के साथ–साथ पृथ्वी के संरक्षण एवं संवर्धन में वनों का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहता है। विशेषकर मिश्रित व तीन स्तरीय वनों (शााक, झाड़ी व वृक्ष) का भूजल पुर्नभरण व संचरण मे विशेष भूमिका होती है (चित्र–06)। वन, पृथ्वी की सतह पर एक स्पंज के रूप मे कार्य कर भू–जल बढ़ाने, नमी संरक्षण, भूमि कटाव व मिट्टी के क्षरण को रोकने का कार्य करते हैं। एक हिसाब से वन पृथ्वी की त्वचा के रूप में कार्य करते हैं। यद्यपि भारतीय वन पत्रिका (इंडिया स्टेट ऑफ फारेस्ट रिपोर्ट 2015) के अनुसार भारत मे वर्तमान वर्ष 2015 में 701,673 वर्ग किमी0 या 21.30 प्रतिशत वनों वाली भूमि है जबकि 29 वर्ष पूर्व 640,819 वर्ग किमी क्षेत्रफल के वन थे। उक्त रिपोर्ट में एक जातिय वृक्षारोपण वन क्षेत्र बढ़ने का कारण बताया गया है (चित्र–07)। किन्तु वनों के घनत्व घटने एवं ग्रामीण क्षेत्रो में वन क्षेत्रफल का विकास कार्यो में उपयोग के कारण अन्तोगत्वा वनो के मानव जीवन में सहयोग में कमी आई है। पारम्परिक रूप से ग्रामीणों को प्राप्त होने वाली वन उपज जैसे लकड़ी, चारा, इंधन व औषधियों पर वन संरक्षण अधिनियम के कारण काफी रोक लग चुकी है। फलस्वरूप स्थानीय निवासियों का वनों को अपना मानने व उनके संरक्षण व संवर्धन की भावना का भी ह्रास हुआ है। जिससे स्थानीय स्तर पर वनीकरण व वनों को आग से बचाने में वन विभाग को अच्छी खासी दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है। विशेषकर भारत का हिमालयी हिस्सा दुरूह भौगोलिक परिस्थितियों वाला भू–भाग होने के कारण वनीकरण व वन अग्नि बुझाने जैसे कार्यो के लिये स्थानीय निवासियों पर ही निर्भर रहता है। अतः वन प्रबंधन में क्षेत्रीय लोगो की भागीदारी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है तभी पृथ्वी दिवस जैसे दूरगामी सोच के कार्यक्रम सार्थक होंगे।

पृथ्वी पर जंगलों का होना सिर्फ इंसान के लिये ही नही बल्कि समस्त जीव–जन्तुओं के लिये आवश्यक है। जंगल प्रकृति का सन्तुलन बनाये रखने के साथ–2 ऋतुचक्र बनाये रखने में अग्रणी भूमिका निभाते हैं। परन्तु इंसान अपने स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण वनों का मूल स्वरूप नष्ट कर रहा है फलस्वरूप वन उपज में कमी होने के साथ–2 पर्यावरण सन्तुलन की समस्या भी उत्पन्न हो रही है। प्रागैतिहासिक काल से ही भारत में वनो का सामाजिक–आर्थिक व सांस्कृतिक महत्व रहा हैं। प्राकृतिक वनो के बीच ही भारतीय संस्कृति व सभ्यता का उद्भव व विकास सम्पन्न हुआ है। एक आकलन के अनुसार एक वृक्ष अपने औसत जीवन काल में फल, लकड़ी, औषधि, छाल, पुष्प के अतिरिक्त 22 लाख रूपये का लाभ पहुंचाता है।

वन हमारे आर्थिक तंत्र में भी अहम भूमिका निभाते हैं जिनमे भारतीय वनों से प्राप्त 500 प्रकार की लकड़ियाँ मुख्य है। लगभग एक करोड़ भारतीय प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से अपनी रोजी–रोटी के लिये वनों पर निर्भर हैं। हमारे देश के 69 लधु व कुटीर उद्योग वनों से ही कच्चा माल प्राप्त होता है। स्थानीय पारिस्थतिकी तंत्र में भी वनों की महत्वपूर्ण भूमिका दृष्टिगोचर होती है। एक परीक्षण के अनुसार गर्मियों के महीनों में वनीकरण से तापमान 10 डिग्री सेल्सियस तक कम किया जा सकता

चित्र–6 : बांज–बुरांस के मिश्रित वन जैव–विविधिता संपन्न

चित्र–7 : देवदार का एक प्रजातीय वन

है जबकि वनीकरण से वर्षा में 10 से 20 प्रतिशत की वृद्वि की जा सकती है।

भारतवर्ष में वन विनाश का इतिहास देखने से पता चलता है कि जंगलों की मुख्य कटाई अंग्रेजों के शासन काल में हुई एवं स्वतंत्रता के पश्चात भी विकास योजनाओं हेतु काफी जंगलों का विनाश हुआ है। वर्ष 1952 में राष्ट्रीय वन नीति की घोषणा की गई जिसके अन्तगर्त सम्पूर्ण क्षेत्र से 33 प्रतिशत भू–भाग पर वनों का विस्तार करना था जिसमें पर्वतीय क्षेत्र के 60 व मैदानी भागों में 20 प्रतिशत क्षेत्र शामिल हैं।

पूर्व वन नीति में वांछित सफलता न मिलने के कारण वर्ष 1988 में नई वन नीति की घोषणा की गई, जिसमें कुछ सफलता हासिल हुई। वनों के विकास हेतु 1979 से विश्व बैंक की सहायता से जलागम प्रबन्ध योजना के अर्न्तगत सामाजिक–आर्थिक ताने–बाने पर भी ध्यान दिया जा रहा है।

धरती : मिट्टी का निर्माण, चट्टानों के बारीक अकार्बनिक चूरे व पेड़–पौधों के सूक्ष्मजीवी जीवाणुओं से मिलकर होता है। विविध भूमि उपयोग एवं इस धरती की मिट्टी सभी जीव–जन्तुओं हेतु आवश्यक है। किन्तु मानवीय हस्तक्षेप के कारण सिर्फ पृथ्वी के भू–उपयोग के साथ–साथ मिट्टी की गुणवत्ता में भी अवांछित परिवर्तन आ गया है। मूल रूप से भूमि पर्यावरण का आधार माना जाता है क्योकि जलवायु की तरह मिट्टी भी एक प्राकृतिक संसाधन है। एक ओर जहां नगरीय सभ्यता के कारण भू–उपयोग में तीव्र बदलाव हो रहा है वहीं बड़े पैमाने पर हुये औद्योगिकीकरण के फलस्वरूप अवशिष्ट पदार्थो का उत्पादन भी बढ़ा हैं । ये अवशिष्ट पदार्थ ठोस, द्रव के रूप में गैर वैज्ञानिक ढंग से भूमि में ही फेंक दिये जाते है जिससे मिट्टी भी प्रदूषित हो जाती है। अच्छी फसलों के उत्पादन हेतु प्रयुक्त कृषि रसायन विशेषकर कीट नाशक भी मिट्टी को प्रदूषित कर भोजन श्रृंखला द्वारा मानव शरीर में प्रविष्ट कर जाते हैं। यहां तक देखा गया है कि मां के दूध में भी डी0डी0टी0 नामक कीटनाशक पाया गया है जो बच्चों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। व्यावसायिक कृषि में पेट्रो रसायन जैसे खतरनाक रसायन खर–पतवार को मारने में प्रयुक्त किये जाते है। ये खतरनाक रसायन मिट्टी के सूक्ष्म–जीव–जन्तुओं को मार कर मिट्टी को बंजर बना देते हैं एवं पानी में घुल कर भू–जल स्रोतों को भी प्रदूषित करते हैं। यह मृदा प्रदूषण भोजन श्रृंखला का हिस्सा बनकर मानव स्वास्थ्य के साथ–साथ पौघो व जानवरों को भी प्रभावित करता है।

नगरो व महानगरों में आर्थिक मजबूरी के साथ – 2 घरेलु अवशिष्ट पदार्थो के कारण भी भूमि प्रदूषण में तीव्र वृद्धि हुई है। विशेषकर घरेलु कचरा जैसे पोलीथीन, प्लास्टिक बरतन, कांच, घातु के डिब्बे, पुराने उपकरण, पुराना फर्नीचर व खिलौने आदि में बेतहाशा बढ़ोतरी हुई है। शहरों में कूड़े–कचरे के निष्पादन हेतु कोई धरातलीय व्यवस्था न होने के कारण ये सभी भूमि या मिट्टी प्रदूषण फैला कर इंसानी जन–जीवन को प्रतिकूल बना रहे हैं। रेडियो धर्मी अवशिष्ट भी मिट्टी के साथ वातावरणीय प्रदूषण फैलाते हैं। विशेषकर परमाणु विस्फोटो व उर्जा संयमों व प्रयोगशाालाओं मे रेडियोधर्मी अवशिष्ट उत्पन्न होकर मिट्टी में पहुंच जाते हैं। इनमें मुख्यतः रूटेनियम–106, रोडियम–106, सीटियम–144, लैनतनियम– 40, बेरियम – 40 व

चित्र–8 : जनजागरण–प्रकृति के साथ प्रकृति की बात

आयोडीन–131 आदि प्रमुख हैं। खनन उद्योग में भी कोयला खनन व गलाने की प्रकिया के हानिकारक रसायन सीधे मिट्टी में पहुंच कर गुणवता समाप्त कर देते हैं । वस्तुत जब तक मिट्टी प्रदूषण मुक्त नही होती तब तक धरती पर निवास करने वाले पेड़ पौधें व जीव जन्तु प्रदूषित भोजन कर विभिन्न प्रकार बीमारियों से ग्रस्त रहेंगे। प्रदूषण के कारण मिट्टी की गुणवता में ह्वास होने से इंसान की मूल आवश्यकताओं जैसे रोटी, कपड़ा और मकान प्रदान करने वाला भूमि संसाधन ही उत्पादकता विहीन हो जायेगा, फलस्वरूप इंसान का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जायेगा। मिट्टी को प्रदूषण से बचाने के लिये मुख्यतः (i) वनीकरण कर वन क्षेत्र बढ़ाना, (ii) रसायनिक उर्वरको व कीटनाशकों पर नियंत्रण (iii) घरेलु कचरे का विधिवत् निस्तारण व प्रदूषण जागरूकता अभियानों को वरीयता (चित्र – 8) आदि कार्यक्रमों को प्रकृति के साथ रहकर प्रभावी ढंग से संचालित करने की आवश्यकता है।

वातावरण : विकास की दौड़ में सर्वोत्तम बनने की लालसा ने इंसान के विकासात्मक क्रिया कलापों द्वारा उत्पन्न वातावरण प्रदूषण के प्रति अनदेखा रवैया अपनाने को मजबूर किया है। वातावरण प्रदूषण एक प्रकार का धीमा जहर है जो सांस लेने के साथ पेड़ पौघों व जीव–जन्तुओं के शरीर में प्रविष्ट कर शरीर को बीमार बना देता है। प्रकृति प्रद्त वातावरण में गैसो के मिश्रण में सबसे अधिक 78 प्रतिशत नाइट्रोजन, 21 प्रतिशत आक्सीजन व 0.03 प्रतिशत कार्बन डाई आक्साइड व शेष 0.97 प्रतिशत हाइड्रोजन, टीलियम, आर्गन, नियान, क्रिप्टन, जेनान, ओजोन व जल वाष्प होती है। इन्ही गैसो के सन्तुलित मिश्रण के उपयोग हेतु इंसान व जीव जन्तुओं का शरीर अभ्यस्त होता है। किन्तु तथाकथित विकसित जीवन शैली ने विभिन्न प्रकार के वायु प्रदूषणों का आगाज कर दिया है विशेषकर वाहनों से निकलने वाला धुंआ तथा रसायन, कार्बनिक व अकार्बनिक पदार्थो के जलने से उत्पन्न गैसें, औद्योगिक इकाइयों से उत्सर्जित गैसे व ठोस कण तथा रसायन तथा आणविक संयंत्रो से निकलने वाली गैसें व धूल–कण आदि ने वातावरण को प्रदूषित कर इंसान के लिये विषैला बना दिया है। विषाक्त वातावरण में सांस लेने से दमा, एलर्जी, खांसी, सर्दी–जुकाम, अंधापन, त्वचा रोग आदि कई प्रकार की बीमारियां हो जाती है। इन बीमारियों के लम्बे समय तक रहने से बाद में आनुवांशिक बीमारियाँ रूप धारण कर लेती हैं। धरती के वातावरण में स्थित ओजोन की परत हमें सूर्य से आने वाली हानि–कारक अल्ट्रावायलेट किरणों से बचाती हैं । किन्तु वातावरण प्रदुषण के कारण ओजोन परत पतली या कुछ देशों जैसे कनाडा आदि के उपर परत में छेद हो गया है जिससे त्वचा कैंसर व अनुवांशिक रोगों का खतरा बढ़ गया है। वातावरण के प्रदूषण से कई देशों में 'अम्ल वर्षा ' हो चुकी है जिससे फसलों, वनो, आवासीय भवनों व ऐतिहासिक इमारतों को नुकसान पहुचता है।

कुल मिलाकर इस निष्कर्ष पर पहुंचा जाता है कि इंसान का विकास रूपी दौड़ में जल, जंगल, जमीन व वातावरण का मौलिक स्वरूप बचाकर ही पृथ्वी को बचाया जा सकता है। 'सतत विकास माडल' की अवधारणा को अपना कर मानव जनित प्रदूषण का वैज्ञानिक निष्पादन करने की आवश्यकता है। साथ ही में विकास कार्यो के कारण प्राकृतिक संसाधनों के ह्वास की भरपाई उनके संरक्षण व संवर्धन द्वारा की जानी चाहिये।

स्टीफेन हाकिंग का वैज्ञानिकों को एक परामर्श

रमेश चन्द्र
पंचकूला, चण्डीगढ़

भौतिकीविद स्टीफेन हाकिंग ने अपनी पुस्तक 'ए ब्रीफ हिस्टरी ऑफ़ टाइम' में वैज्ञानिक पद्धति (साइंटिफिक मेथड) के विषय में जो परामर्श दिया है उस से सम्बंधित कुछ विचार यहाँ प्रस्तुत हैं ।

इतिहास

माना जाता है कि वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग सर्वप्रथम कोपरनिकस ने 16वीं सदी में सौर मण्डल के अध्ययन के लिये किया था । गैलिलियो (1564–1642 ई) तथा न्यूटन (1642–1727 ई) ने 17वीं सदी में इस पद्धति का अपने शोध कार्यों में प्रयोग कर इसे प्रोत्साहन दिया था । जेम्स हट्टन (1726–1797 ई) ने शिलाओं के समग्र अध्ययन के लिये वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग 18वीं सदी के उत्तरार्ध में किया था ।

संकल्पना (हाइपोथिसिस)

वैज्ञानिक पद्धति के प्रचलित स्वरूप में संकल्पना (हाइपोथिसिस) की अहम भूमिका है । साधारणतया विज्ञान की किसी नई खोज के लिये प्रयोगशाला अथवा फील्ड से प्राप्त ओब्ज़रवेशन्स को समझने का लिये एक संकल्पना, अर्थात कुछ उपयुक्त एज़म्पशन्स के संग्रह, को आधार बनाया जाता है । इस के विपरीत कुछ वैज्ञानिक अपनी खोज के लिये पहले एक संकल्पना की कल्पना करते हैं और फिर उसे सिद्ध करने के लिये उपयुक्त ओब्ज़रवेशन्स एकत्र करते हैं । बीसवीं सदी के मध्य काल में मौरिस इयुइंग, जिनके समुद्री क्षेत्रों सम्बंधित भूवैज्ञानिक तथा भूभौतिकीय अनुसन्धान प्रसिद्ध हैं, का यही तरीका था । चेष्टा की जाती है कि हाइपोथिसिस की एज़म्पशन्स प्रमाणित हों अथवा उन्हें प्रमाणित किया जा सके । प्रथा है कि जब, अनेक बार, उसी खोज से सम्बंधित नई ओब्ज़रवेशन्स को एक ही हाइपोथिसिस से समझ लिया जाता है तो उस हाइपोथिसिस को सिद्धांत (थ्योरी) कहने लगते हैं ।

विज्ञान के इतिहास में, मान्य हाइपोथिसीस तथा सिद्धांतों को नई ओब्ज़रवेशन्स के आधार पर त्याग कर नये हाइपोथिसीस अपनाने के अनेक उदाहरण हैं। भूविज्ञान के क्षेत्र में, दीर्घ काल तक मान्य ग्रेविटी टेक्टोनिक्स हाइपोथिसिस के स्थान पर अब प्लेट टेक्टोनिक्स सिद्धांत का वर्चस्व है । यह परिवर्तन इस लिये भी विशेष है कि ग्रेविटी टेक्टोनिक्स हाइपोथिसिस गलत सिद्ध नहीं हुआ है । परन्तु अब तक उपलब्ध ओब्ज़रवेशन्स को ध्यान में रखते हुए, हम इस हाइपोथिसिस को समस्त भूविज्ञान का एक मात्र आधार नहीं मान सकते ।

हाकिंग का परामर्श

दार्शनिक फ्रेन्सिस बेकन (1561–1626 ई) के लगभग 400 वर्ष पुराने एक विचार (स्टेनग्रूम तथा गार्वे 2012) को स्टीफेन हाकिंग ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ 10–11 पर इस प्रकार व्यक्त किया है: 'हर (वैज्ञानिक) सिद्धांत को सदा एक हाइपोथिसिस ही समझना चाहिये। इस का कारण है कि किसी हाइपोथिसिस से चाहे कितनी बार नई ओब्ज़रवेशन्स को हम समझ लें, यह निश्चित नहीं है कि भविष्य में उपलब्ध होने वाली ओब्ज़रवेशन्स भी उसी हाइपोथिसिस से समझी जा सकेंगी। एक विपरीत ओब्ज़रवेशन भी एक हाइपोथिसिस अथवा सिद्धांत को नकार सकती है।' सम्भवतः इसी लिये आइनस्टाइन (विकिपेडिया, नवम्बर 2017) ने लिखा था: 'मेरे किसी वैज्ञानिक निष्कर्ष को सही सिद्ध करने के लिये जितने भी प्रयोग हों वे अपर्याप्त रहेंगे ।'

इस तर्कपूर्ण परामर्श को हाकिंग तथा कतिपय अन्य वैज्ञानिकों का निजी मत ही समझना चाहिए। इस परामर्श को अपनाने से किसी वैज्ञानिक खोज से प्राप्त निष्कर्षों के मूल्यांकन तथा विज्ञान के प्रति वैज्ञानिकों के सामान्य विचारों पर प्रभाव सम्भव है। परन्तु इस परामर्श को अपनाना अनिवार्य नही है ।

संतुलन

हाकिंग के परामर्श में भविष्य में उपलब्ध होने वाली ओब्ज़रवेशन्स के आधार पर वर्तमान हाइपोथिसिस अथवा सिद्धांत नकारे जाने की सम्भावना को अत्यधिक महत्व दिया गया है। संतुलन के लिये न्यूटन के

गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत का स्मरण उपयुक्त है । न्यूटन अपने जीवन काल में यह तो जान गये थे कि उन का सिद्धांत नितांत उपयोगी सिद्ध हो सकता है, पर वह यह नहीं जान पाये थे कि गुरुत्वाकर्षण अंततः होता क्यों है। आइनस्टाइन के जनरल रेलेटिविटी सिद्धांत से गुरुत्वाकर्षण के कारण पर एक हाइपोथिसिस बन गया है और न्यूटन के सूत्र में संशोधन किया गया है । फिर भी, गत 350 वर्षों में, न्यूटन के मूल सूत्र से प्रकृति में होने वाली कई, अत्यन्त विविध, प्रक्रियाओं को हम समझ पाये हैं और यह सूत्र आज भी प्रयोग में है । इस उदाहरण से आशा होनी चाहिये कि भविष्य में एक वैज्ञानिक खोज ऐसी भी हो सकती है जिस का हाइपोथिसिस आरम्भ से ही कभी नकारा न जा सकने वाला और सिद्धांत कहलाने योग्य होगा ।

तो क्या हाकिंग के कहने पर प्रचलित वैज्ञानिक पद्धति में किसी खोज से सम्बंधित हाइपोथिसिस को समय के साथ सिद्धांत कहने की प्रथा समाप्त कर देनी चाहिये? यह लेख पढने वाले वैज्ञानिक, और विज्ञान में रुचि रखने वाले सामान्य पाठक भी, इस प्रश्न पर कुछ विचार अवश्य करें ।

नोट :

स्टीफेन हाकिंग (1988) : 'ए ब्रीफ़ हिस्ट्री ऑफ़ टाइम'; बेंटम बुक्स, टोरोंटो; 211 पृष्ठ ।

जेरेमी स्टेनग्रूम तथा जेम्स गार्वे (2012): 'दी ग्रेट फिलोसोफर्स, फ्राम अरिसटाटल टू फूकाल्ट'; आर्कटूरस पब्लिशिंग लिमिटिड, लन्दन; 160 पृष्ठ ।

बूंद–बूंद नही बरतेंगे तो, बूंद–बूंद को तरसेंगे

डा. रंजना सिंह
भूतत्व एवं खनिकर्म निदेशालय
उत्तर प्रदेश, लखनऊ

प्रत्येक क्षेत्र के पुराने बाशिंदो ने प्रकृति की भाषा को समझकर उससे सम्बन्ध स्थापित किया। बदले मे प्रकृति ने भी इन्सानों के साथ मातृतुल्य सम्बन्ध निभाया और जमीन, जंगल, नदी, झरने, पहाड़, नाले इत्यादि अनगिनत अवयवों का खजाना खोल दिया। इन्सानों ने भी इनको सर–माथे लिया। ना तो इनके मूल स्वरूप के साथ छेड़छाड़ की, ना ही अपनी जरूरत से अधिक इनका दोहन किया। दौर बदलते गये प्रकृति ने अपनी जीवनदायिनी शक्ति देना नही छोड़ा लेकिन इन्सान अतिभौतिकवादी हो गया, अत्यधिक पाने कि लालसा मे प्रकृति का दोहन नही शोषण करने लगा, इन्सान कुदरत लोभी हो गया, संपोषित विकास की अवधारणा मानव ने त्याग दी।

प्रकृति के समस्त उपादान एक दूसरे से जुड़े हुए है। पहाड़ है तो नदियाँ है, वन है तो जमीन उपजाऊ है, भूजल स्तर ऊँचा है। इनमे से किसी भी एक प्राकृतिक तत्व के साथ छेड़छाड़ की जाये तो प्रकृति का स्वाभाविक तंत्र बिगड़ जाता है। इस संतुलन के बिगड़ने से मनुष्य पर परोक्ष और प्रत्यक्ष, प्रतिकूल प्रभाव पड़ते है। पृथ्वी पर वैसे तो 75 प्रतिशत जल है लेकिन इसमे पेयजल की मात्रा बहुत कम है। कुछ क्षेत्रो में पेयजल की भी भयंकर समस्या है जैसे पश्चिमी राजस्थान। जिन राज्यों मे बहुतायत मात्रा मे पानी है वहाॅ हरितक्रान्ति की प्रगति में अंधाधुध कीटनाशको का प्रयोग किया गया जिन्होने भूजल को दूषित कर दिया जैसे पंजाब, हरियाणा।

भारत के कुछ भागों में बारहमासी नदियाँ नही है राजस्थान उनमे से प्रमुख है। चम्बल को छोड़ दे तो पूरे प्रदेश मे कुछ मौसमी नदी/नाले हैं जिस कारण राजस्थान के पूर्वी–पश्चिमी इलाकों मे पेयजल की भारी कमी है। वहाॅ के पुराने लोगों ने पानी की किल्लत को देखते हुए भी प्रकृति के साथ बहुत छेड़छाड़ नही की थी और परम्परागत तरीकों से ही जल संग्रहण किया जाता था। उस वक्त के लोगों की अदम्य जिजीविषा ने प्रकृति के साथ तालमेल बनाया परन्तु आज मनुष्य ने प्रकृति के साथ बने उस सेतु को तोड़ दिया।

पानी अपना रास्ता खुद बना लेता है। प्रकृति ने उसे ये खासियत तोहफे मे दी है। बारिश की कुछ बूंदे भी एकत्र होकर पहाड मे छोटा सा नाला बना देती है, एक छोटा सा नाला भी कई किलोमीटर तक के भूगर्भिक जल को बढावा देता है। यह प्रकृति की इंजिनियरिंग है। अरावली पर्वत श्रृंखला से छोटे–छोटे नाले, छोटी–छोटी मौसमी नदियाँ बनती थी। जिनसे झुनझुनु, सीकर, चुरू (शेखावाटी क्षेत्र) मे भूगर्भ जल का स्तर बना रहता था। मानव ने उस पहाड़ को छीला और कुछ को नेस्तनाबूद कर दिया। नाले बनने बन्द हो गये या प्रवाह मार्ग अवरूद्व हो गये। गाँवों को जोड़नें वाले मार्गो पर जब पक्की सड़के बनी तब भी इसका ध्यान नही रखा गया। गाँवों मे जोहड़, कुएं, बावड़ी को मुख्यतः जल प्रवाह को ध्यान मे रखते हुये रिर्जव किया गया था जिससे गाँव के आस–पास का बरसाती जल और पहाड़ी नालों का जल एक जगह एकत्रित हो सके उस पर भी रही सही कसर अवैध कब्जों ने पूरी कर दी। लोगों ने कुएँ गहरे से और गहरे कर दिये, भूगर्भ का सारा पानी इन्सानों ने सोख लिया। नतीजन कृषि के लिये निहायत कारगर जमीन भी बंजर होती गई।

इन्सान ने अपनी शक्ति प्रदर्शन में धरती को हजारों फुट तक खोद ड़ाला लेकिन किसी ने यह नही सोचा कि पुरखों ने जल संग्रहण की व्यवस्था कैसे की है। शहर के आस–पास जो नदियों के पाट थे उनमे लोगों ने कब्जे कर रिहाइश बना ली। यही हाल ग्रामीण स्तर का हुआ। गाॅवों के आस–पास के नालों या बरसाती पानी के प्रवाह को अवैध कब्जो ने रोक दिया जिससे पारम्परिक जल स्रोत जोहड़, कुएं, बावड़ी इत्यादि सूख गये। इस कारण सिंचाई तो छोड़ो, पेयजल के भी लाले

हो गये। राजस्थान के अधिकांश जिलो को डार्क जोन के तहत बाध्य कर दिया गया है कि उन जिलों मे नये कुएँ या बोरवेल नही खोदे जा सकते।

इन्सान ने खुद अपने पावों पर कुल्हाड़ी मार ली और सारा दोष दिया है मानसून और प्रकृति पर। यही हाल रहा तो हमारी आने वाली पीढ़ियाँ पेयजल के लिये मारामारी करेगी और हमें कोसेंगी। हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि अत्याधुनिक तरीकों से पेयजल और सिंचाई हेतु जल की उपलब्धता जब तक नही हो पाती तब तक परम्परागत जल संग्रहण के तौर तरीकों को बनाये रखे अन्यथा 'जल है तो कल है' जैसे नारे जो आज तो उत्प्रेरक का कार्य करते हैं कल युद्व का कारण भी बन सकते हैं। जो मानव सभ्यता को विनाश की ओर अग्रसर करेगा।

सतत विकास

डॉ. मीनल मिश्रा
विज्ञान विद्यापीठ,
इं.गां.रा.मु.वि. मुख्यालय, नई दिल्ली

प्रकृति ने न जाने कितने समय से पृथ्वी पर जीवन का पालन–पोषण किया है, उसे जारी रखा है और भविष्य में भी वह ऐसा करती रहेगी। प्रकृति ने मानव समाज तथा उसकी अर्थव्यवस्था को एक जटिल जीवन रक्षा प्रणाली, हवा, पानी, भोजन तथा जीवित रहने के लिए एक उपयुक्त वातावरण प्रदान किया है। इसे हम प्रकृति अथवा पारिस्थितिकी तंत्र अथवा पर्यावरण की सततशीलता कहेंगे। यदि हम अपनी लालची प्रवृत्ति एवं गतिविधियों द्वारा प्रकृति की प्रणाली की सततशीलता के साथ हस्तक्षेप करते रहें तो मानव का अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा। एक बार प्रकृति की प्रारम्भिक अवस्था में फेरबदल होने के बाद उसे प्रारम्भिक अवस्था में नहीं लाया जा सकता। मानव के समक्ष यह निर्धारित करने की चुनौती है कि हम किस प्रकार के वातावरण तथा अवस्था में रहना चाहते हैं। प्रकृति की ग्रहण क्षमता के भीतर उसकी प्रक्रियाओं में निहित सीमाओं में अपना जीवन कैसे निरन्तर बनाए रख सकते हैं यही मानव मात्र को निर्धारित करना है।

सततशीलता शब्द का प्रयोग विकास नीतियों के सांसारिक तथा जीवनयापन के संदर्भ को प्रदर्शित करने के लिए भी किया जा सकता है। आइए हम सततशीलता शब्द की व्याख्या करें। सततशीलता का अर्थ एक प्रक्रिया अथवा स्थिति से है जो सदा के लिए बनी रहे। प्राकृतिक संसाधनो का प्रयोग इस प्रकार से हो जिससे पारिस्थितिकी सम्बंधी कोई असंतुलन न हो, प्रकृति की ग्रहण एवं उत्पादक क्षमता का अतिशोषण न हो। सतत विकास में ऐसे आर्थिक एवं सामाजिक विकास शामिल हैं जो प्राकृतिक पर्यावरण तथा सामाजिक न्याय नीति को सुरक्षित रखते हैं और उनका संवर्द्धन करते हैं। सतत विकास मनुष्य और उसके पर्यावरण पर केन्द्रित करते हुए एक चेतावनी देता है कि मनुष्य प्रकृति के विरूद्ध विकास को नहीं ढकेल सकता क्योंकि अंत में प्रकृति की विजय होती है। सतत विकास प्राकृतिक संसाधनो तथा पर्यावरण के संरक्षण एवं परिरक्षण और उर्जा, कचरे तथा परिवहन के प्रबंध को प्रोत्साहन देता है। सतत विकास उत्पादन व उपयोग के ऐसे नमूनों पर आधारित विकास है जिसका मानव अथवा प्राकृतिक पर्यावरण को नुकसान पहुचाए बिना भविष्य में अनुशीलन किया जा सकता है।

सतत विकास के कुछ दूरदर्शी तथा व्यापक उद्देश्य है जो वर्ग, जाति, भाषा, क्षेत्रीय पाबंदियों से परे है। ये उद्देश्य पोषण मनोस्थिति की जंजीरों से अर्थव्यवस्था की मुक्ति हेतु एक अधिकार पत्र है जिन्होने राष्ट्रों को नष्ट और उनकी जैव सम्पदा को कम किया है। सतत विकास सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय तथा राजनीतिक चिन्तनों को एक करने वाली एक निरन्तर विकासमान प्रक्रिया है।

सतत विकास की अवधारणा की जड़ों को 1960 के दशक में तब से देखा जा सकता है जब वैज्ञानिक रॉकल कारसन ने 'दि साइलेंट स्प्रिंग' (1962) शीर्षक की एक पुस्तक लिखी थी। इस पुस्तक में कीटनाशक डी. डी. टी. के प्रयोग से वन्य जीवन के सर्वनाश की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया था। यह पुस्तक पर्यावरण अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक भलाई के बीच परस्पर सम्बंधो के अध्ययन में मील का पत्थर साबित हुई। इसी काल में धीरे–धीरे भूमण्डलीय पर्यावरणीय सीमितताओं की आशंका का भी उदय हुआ। दी साइलेन्ट स्प्रिंग के बाद शीध्र ही जानवर जनसंख्या जीव विज्ञान शास्त्री पाल इहरलिच ने 1968 में अपनी पुस्तक 'पापुलेशन बम' प्रकाशित की जिसमें उन्होंने मानव जनसंख्या, संसाधन दोहन तथा पर्यावरण के बीच सम्बंधों पर प्रकाश डाला। 1969 में गैर लाभकारी संस्था 'फ्रेन्डस आफ दि अर्थ' बनाई गयी जिसे पर्यावरण के पतन से सुरक्षा और निर्णय प्रक्रिया में नागरिकों को भाग लेने हेतु सशक्त बनाने के लिए समर्पित किया गया।

सतत समाज की अवधारणा का जन्म 1974 में विश्व चर्च परिषद द्वारा बुलाई गई 'मानव विकास के लिए विज्ञान एवं प्रौघोगिकी का अध्ययन' सम्मेलन में हुआ। सतत समाज में लोकतंत्रीय भागीदारी की अवधारणा भी

निहित थी जो लगभग 20 वर्ष बाद रियो पृथ्वी सम्मेलन 1992 का एक महत्वपूर्ण विषय बनी। 1980 में दो विद्वानों भूवैज्ञानिक एवा बालफोअर तथा पर्यावरण व विकास के अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान के एक आनुवांशिकी शास्त्री वेक जेकसन ने सतत विकास की अवधारणा सामने रखी। 2000 तक सतत विकास की अवधारणा तो सभी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के निर्देशित सिद्धांत के रूप में स्थापित हो चुकी थी। पर्यावरण के आधार पर अच्छा और सतत विकास पृथ्वी सम्मेलन का परिणाम रहा है और अब सभी आर्थिक तथा सामाजिक चर्चाओं का केन्द्र बन गया है। विभिन्न राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय अभिकर्ताओं की समस्या को समझने का भिन्न उपागम रहा है।

पर्यावरण का संरक्षण तथा जनता की दीर्घकालीन सम्पन्नता में विभिन्न एजेंसियां लगी हैं और उनमें पद्धतियों का भी अंतर है, बहुआयामी उपागम सतत विकास के प्रमुख सिद्धांतो को स्पष्ट करता है। सततशीलता एक व्यापक तथा एकीकृत नमूना है जो एक उच्च स्तर की राजनीतिक वचनबद्धता तथा राष्ट्रीय राजनीतिक प्राथमिकताओं पर एक प्रभावशाली संस्था की मांग करता है।

सतत विकास की जड़ें संसाधन उपयोग तथा उनके वितरण एवं स्वामित्व के प्रतिमानों में हैं। अतः सतत विकास की नीति का निर्माण राजनीतिक तथा राज्य विनियमनों के बिना नही हो सकता। आर्थिक चर्चाओं के केन्द्र में अब सतत विकास के मुद्दे हो गये हैं और अब वे आर्थिक अभिवृद्धि तथा विश्व व्यापार के नमूनों को निर्धारित कर रहे हैं। आर्थिक समस्यायें संसाधन संकट तथा पर्यावरण क्षय को गम्भीर बना देती हैं। इसके परिणामस्वरूप इससे प्रतिबंधित आर्थिक पुनरूत्थान होता है जिससे पर्यावरण के गैर सतत उपयोग की समस्याओं को सुलझाने में राष्ट्रों को कठिनाई होती है। एक ऐसे विश्व में जहां प्रगति राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बंधों के जटिल समुच्चय पर निर्भर करती हो वहां अभिवृद्धि के सतत विकास की ओर किसी भी कदम में अनसुलझी समस्यायें व चुनौतियां होती है। बहुराष्ट्रीय व्यवसायों की परम्परागत कार्यसूची विकासशील तथा संक्रमणशील देशों के सतत विकास कार्यक्रमो के लिए अनुपयुक्त है।

परिवर्तनशील जीवनशैली तथा उत्पादन की पद्धति की चुनौती को एक न्याय युक्त व्यवस्था की ओर एक प्रौद्योगिकी परिवर्तन की आवश्यकता होगी। आर्थिक अभिवृद्धि को आर्थिक कल्याण में तब तक बदला नही जा सकता जब तक कि आर्थिक नीतियों में वित्तीय एवं प्राकृतिक संसाधनों की कीमतों और लाभों के वितरण का लेखांकन नही हो जाता।

आमतौर पर ऐसा देखा गया है कि विकास की कीमत का बोझ तो गरीब व मात्र जीवन निर्वाह कर रहे समुदायों को सहना पडता है जबकि लाभ केवल अमीरों की जेबों में ही जाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंधों में भी यह बात लागू होती है जहां पर गरीब देशों के ऋण तथा ऋण भार से मुक्ति यानि ऋण के भुगतानों के दबाव में आकर अपने संसाधनों का अतिदोहन अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करना पड़ता है। इसके लिए उन्हें अपने पर्यावरण संसाधनो का गैर सतत तरीके से दुरूपयोग करना पड़ता है। इसलिए विश्व में सतत आर्थिक समृद्धि के लिए प्राथमिक आवश्यकता इस बात की है कि अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था को अधिक स्पन्दनशील ढंग से उठा सके। इसके लिए ऋण सेवा के लिए एक दृढ़ कार्यवाही की भी आवश्यकता होगी जिससे गरीब देश ऋण जाल से मुक्त हों और विश्व के आर्थिक उपलब्धि कार्यक्रमों में भाग लें सकें। सतत विकास की सफलता विकासशील देशों की क्षमता विकास तथा पर्यावरण प्रबंधन पर निर्भर करेगी। इस कार्यक्रम का प्रमुख लक्ष्य प्रौद्योगिकी, सामाजिक नीतियों, राजनीतिक व सांस्कृतिक नमूनों में प्रवर्तन के माध्यम से मानव तथा प्राकृतिक संसाधनों के लिए बेहतर प्रबंधन व्यवहारों का निर्माण करना है।

स्थावराणं हिमालयः

अजय कुमार बियानी
भूविज्ञान विभाग, डी.बी.एस. देहरादून

''स्थिर रहने वालो मे मैं हिमालय हूँ।''

यह बात भगवान श्री कृष्ण ने गीता के दसवे अध्याय के चौबीसवे श्लोक मे कही थी। अर्जुन अपनी जिज्ञासा को शांत करने के लिए कुरूक्षेत्र के युद्व स्थल में एक–के–बाद–एक प्रश्न कर रहा था और भगवान उत्तर दे रहे थे। यह उत्तर भगवान ने अर्जुन की जिज्ञासा कि मैं आपको किस रूप में देखूं! , को शांत करने के लिए दिया था ।भगवान ने कहा हर क्षेत्र में जो भी सर्वश्रेष्ठ है, वह मैं ही हूँ। इस संदर्भ में उन्होंने विश्व की समस्त नदियों में अपने आप को गंगा बतलाया था। निर्विवाद है कि हिमालय विश्व के समस्त पर्वतों में सर्वश्रेष्ठ है, चाहे वह ऊँचाई के विषय में हो या नदियों के विषय में या भूवैज्ञानिक रूप के विषय में।

एक भूवैज्ञानिक के लिए यह कथन बहुत अजीब सी स्थिति उत्पन्न कर देता है कि हिमालय को स्थिर किस तरह से स्वीकार किया जाये। हिमालय विवर्तन से उत्पन्न पर्वत है और विर्वतन की स्थिरता की कल्पना करना भूविज्ञान को झूठलाने के समान है। प्लेट विवर्तन सिद्धांत के चलते आज दुनिया में कोई भी स्थल स्थिर नही है। सब कुछ चलित स्थिति मे है, हाँ चलन की गति इतनी अल्प है कि वह हमें प्रतीत नही होती है। न थल स्थिर है और न नदी, जल, जल के नीचे वाला थल भी उतना ही अस्थिर है जितना जल के ऊपर वाला थल। यह अवश्य है कि चलन की गति कही पर कम है और कही पर अधिक। जो भी कुछ है वह कुछ सेन्टीमीटर प्रति वर्ष की दर से है। न समझ में आने वाली गति या न महसूस होने वाली गति तथा पर्वत की दूरूह ऊँचाई के कारण इसको अजेय, अचल जैसी संज्ञाओ और विशेषणों से अलंकृत किया गया है। हिमालय का उत्थान करोड़ो वर्षों से कमोबेश सतत चलने वाले क्रियाओं का परिणाम है। इन क्रियाओं से जनित विभिषिकांए आम आदमी के लिए भूकम्प और भूस्खलन जैसी गतिविधियों में परिलक्षित होती है। ये क्रियाएं महसूस भी होती है,दिखती भी है परन्तु समापन के पश्चात् कुछ चिन्हों को छोड़कर स्थिति यथावत हो जाती है। इसलिए अन्तर महसूस नही हो पाता है। अपवाद स्वरूप बड़ी घटनाएं यथा 2013 की केदारनाथ आपदा स्मृति पटल पर गहरा प्रभाव डालती जरूर है, परन्तु समय के साथ धूमिलता प्रभावी होने लगती है। और कुछ समय बाद इतिहास की एक घटना बन कर रह जाती है।

एक भूवैज्ञानिक जो पृथ्वी पर होने वाली हर प्राकृतिक घटना का बारीकी से अध्ययन करता है। उसके लिए हिमालय की स्थिरता अथवा हिमालय की स्थिरता को आत्मसात करना असंभव है। आज हिमालय की वास्तविक स्थिति यह है कि यह कहीं पर ऊपर उठ रहा है। कहीं पर नींचे धँस रहा है, कही पर उत्तर में खिसक रहा है तो कहीं पर दक्षिण में। हिमालय के अन्दर की शैले अगर हर पैमाने पर बेरहमी से मोड़ी गई है तो अधिक क्रूरता से तोड़ी भी गई है। अगर शैलों को धक्का देकर दसियों किलोमीटर खिसकाया गया है तो आसमान को छूने के प्रयास चलते गगन चुंबी ऊँचाई तक उठाया भी गया है। यह ही एक विवर्तनिक पर्वत की नियति होती है। विवर्तनिक पर्वतों में अन्दर और बाहर अस्थिरता के भूवैज्ञानिक प्रमाणों की भरमार होती है। इनका सक्षमता से अध्ययन अलग–अलग विधाओं की जानकारी के बाद ही संभव हो पाता है। पर्वतों मे क्षैतिज तिर्यक एवं उर्ध्वाकार यानी कि हर तरह की गति से संबंधित क्रियांए धीमी परन्तु लम्बी अवधि के लिए संचालित होती है। पर्वतों का ऊपर उठना और उनकी चौड़ाई का विस्तार होना या संकुचन होना, बिना गतिशीलता के संभव नही है। भारत रूपी नाव जिसमें हम नागरिक के तौर पर सवार हैं, आज वह अपनी इस वर्तमान स्थिति में 7000 किलोमीटर से अधिक का सफर तय कर आई है। इस सफर के चलते धरा के गर्त में कितना भू–भाग समाया है यह तो वही जाने जो इसे नियन्त्रित करता है। हाँ, भू–वैज्ञानिकों का अनुमान अधिकतम 3000 किलोमीटर का है। इसी प्रकार हिमालय के कुछ अंश दक्षिण दिशा में अपने मूल उद्‌गम स्थान से 70–80 किलोमीटर तक गए है। हिमालय को पर्वत की आकृति में निखारने वाली कार्टे विभिन्न कोणों पर झुकी हुई है, जो ऊपर अधिक झुकी हुई प्रतीत होती है और पृथ्वी के अन्दर अपने झुकाव शमन करती है, ताकि ऊपर उठनें में आसानी हो सकें।

मानवीय बुद्धि के चलते हिमालय ही नही बल्कि

इसी श्रेणी के सभी पर्वतों में चाहे वे प्राचीन हो अथवा अर्वाचीन बिना गतिशीलता के बन नही सकते हैं। ऐसा भू–वैज्ञानिकों का मानना है। भूविज्ञान की शैशव अवस्था मे संकुचन की परिकल्पना हावी थी, जिसमें बड़े पैमाने पर क्षैतिज विसर्पण को स्वीकार नही किया गया था। इस परिकल्पना में उर्ध्वाधार विसर्पण को प्रमुखता दी गई थी। विसपर्ण उर्ध्वाधार हो या क्षैतिज, कही न कही गतिशीलता तो है ही।

उभर कर यह प्रश्न आता है कि आखिरकार भगवान जो सर्वशक्तिमान है, उन्होंने हिमालय को क्यों स्थिर बताया ? भगवान अपने आप को सर्वशक्तिमान घोषित करते हुए कहते है कि यहाँ प्रकृति जो भी कार्य कर रही है, वह मेरी अध्यक्षता अर्थात देख–रेख में कर रही है। "मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूर्यात् सचराचरम्" (9/10)। इस श्लोक का आशय यही है कि इस जगत में जो भी जीवित अथवा अजीवित है उनका निर्माण अथवा विनाश मैं ही करता हूँ। देखा जाए तो निर्माण और विनाश, दोनो बिना गति के संभव नही है। कोई अगर स्थिर भी है तो उसे स्थिरता की अवस्था में लाने के लिए गति का सहारा अवश्य लिया होगा। अगर स्थिरता में गति सन्निहित है तो स्थिरता का तात्पर्य क्या लिया जाए ? स्थिरता का एक तात्पर्य तो यह हो सकता है कि हिमालय शक्तिशाली वायु के प्रवाह के मध्य स्थायी रूकावट बन कर खड़ा है तथा मनुष्यों और जीव–जन्तुओं के निर्बाध प्रवाह को रोकता है। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि इसमें होने वाले परिवर्तन इतनी सूक्ष्म गति से हो रहे है कि जनमानस को उनका आभास भी नही हो पाता है।

एक कारण हम यह भी दे सकते है कि भगवान ने मनुष्य के रूप में अवतार लिया था। अतः उनकी समस्त क्रिया को मानवीय समझ और मानवीय क्षमता के दायरे मे आंका जाना चाहिए । इस तर्क से सहमत इसलिए नही हुआ जा सकता है कि भगवान चाहें मनुष्य के रूप में जन्मे हों परन्तु जब–जब आवश्यकता लगी उन्होने दैवीय शक्ति का उपयोग करना पड़ा था। इस तरह के कई और तर्क दिये जा सकते हैं। परन्तु तर्कों के साथ एक समस्या है कि तर्क एक हद तक संतुष्टि दे कर हमें पूर्णतः निरूतर तो कर सकते हैं परन्तु पूर्ण संतुष्टि नही दे सकते हैं।

संस्कार में पले– बढ़े व्यक्ति के लिए भगवान गलत नही हो सकते हैं। तो फिर हम भगवान के इस स्थिरता वाले व्यक्तव्य को किस प्रकार लें। भगवान का यह व्यक्तव्य अपनी विभिन्न विभूतियों का वर्णन करते हुए आया था। इसी वर्णन में उन्होंने कहा कि मैं छल करने वालो में जूआ हूँ और दमन करने वालों की ताकत हूँ। क्या हम जूए तथा दमन की ताकत को सही ठहरा सकते है। कानूनी रूप से उत्तर होगा नही तो फिर यह विरोधाभास क्यों ?

इसका भी उत्तर भगवान एक नही, कई जगह देते है। छह स्थल पर तो गीता में भगवान,संदर्भित विषय की चर्चा करते हुए कहते है कि इस विषय पर विद्वानों के विभिन्न मत है और मेरा मत यह है, कि जो मत तुम्हें अच्छा लगे उसे मानो। मेरा मत, मानना जरूरी नही है। साथ ही साथ सत्रहवें अध्याय मे तो भगवान यह भी कहते है कि अगर कही पर कोई असमंजस अथवा विरोधाभास की स्थिति है तो उसमे शास्त्र को प्रमाण मानकर शास्त्रों द्वारा बताये हुए रास्ते का अनुसरण करो (16/24), इसी श्लोक में भगवान जोर देकर कहते है कि शास्त्र विधि का पालन आवश्यक है। साथ ही साथ भगवान एक अन्य स्थल (3/21) पर यह भी कहते है कि मनुष्यों को समाज के अग्रणी लोगों द्वारा दिखाये हुए रास्ते पर चलना चाहिए। अगर हम उपरोक्त दो श्लोको के भावार्थ के अनुसार चले तो कोई समस्या नही रह जाती है। परन्तु, यह प्रश्न शेष अथवा अनुत्तरित रह जाता है कि भगवान ने हिमालय को स्थिर क्यों कहा ? संभव है, इस प्रश्न पर उत्तर के लिए हमें पर्वत उत्पत्ति के नए सिद्वान्त का इन्तजार करना पड़े। गीता अध्यात्म विज्ञान की पुस्तक है न कि भौतिक विज्ञान की। इसकी बहुत सी बातें अभी ठेठ विज्ञान की कसौटी पर अप्रमाणित है। जैसे आत्मा का अस्तित्व, भगवान का अस्तित्व इत्यादि। गीता युद्ध में भूमि बोली गई और इसका उददे्श्य था कि कर्म, ज्ञान और भक्ति के इन तीन मार्गो में से कोई एक मार्ग चुन कर जीवन को सही अर्थों में जीवन के सर्वोच्च उददे्श्य को ध्यान मे रख कर जीवन को कैसे सफल बनाया जाए। विज्ञान की स्वीकार्यता प्रमाण उपलब्ध होने के कारण है। प्रमाण के अभाव में विज्ञान परिकल्पना है। परिकल्पना से सिद्वान्त का सफर छोटा भी हो सकता है और लम्बा भी। जो आज अनुत्तरित वह कल उत्तरित हो सकता है, कही पर विज्ञान आश्चर्यजनक गति से छलांगे लगा रहा है तो कही पर अत्यंत मंथर गति से प्रगति कर रहा है।

मातृभाषा के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा : आज के समय की महत्वपूर्ण आवश्यकता

डॉ. श्रीमती स्वाति चड्ढा
सीएसआईआर–एनसीएल,पुणे

प्रायः इस बात को लेकर बहस होती आई है कि प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में ही दी जाए। इस संबंध में विभिन्न बाल मनोवैज्ञानिकों, शिक्षाविदों, विद्वानों ने बड़े मजबूत तर्क भी रखें है कि क्यों मातृभाषा को ही शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिए। लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से ही हम देख रहे हैं कि विभिन्न राज्यों के शिक्षा मंडलों ने इन तर्कों पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया और आज हालात कुछ ऐसे हो चुके हैं कि लगभग 95 प्रतिशत विद्यालय सिर्फ अंग्रेजी माध्यम से ही शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। विभिन्न राज्यों के क्षेत्रीय भाषा के माध्यम वाले स्कूलों की संख्या घटती चली जा रही है। यह सिद्ध हो चुका है कि मातृभाषा में शिक्षा बालक के उन्मुक्त विकास में ज्यादा कारगर होती है। अलग–अलग आर्थिक परिवेश के बालकों में विषय को ग्रहण करने की क्षमता समान नही होती। अंग्रेजी में पढ़ाए जाने पर और कठिनाई होती है। जिनका पूरा परिवेश ही अंग्रेजी भाषामय हो, ऐसे परिवार देश में कम ही हैं। मातृभाषा या अपनी भाषा के माध्यम से जब पढ़ाया जाता है तो बालकों के लिए सरल सहज वातावरण पनपता है और वह अच्छे से सीख पाता है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर जी ने मातृभाषा को बड़े सम्मान से देखा और कहा कि अपनी भाषा में शिक्षा पाना जन्मसिद्ध अधिकार है। मातृभाषा में शिक्षा दी जाए या नहीं इस तरह की कोई बहस होना ही बेकार है, उन्होंने कहा है कि अपनी मातृभाषा में शिक्षा पाने का जन्मसिद्ध अधिकार भी इस अभागे देश में तर्क और बहस का विषय बना हुआ है। उनकी मान्यता थी कि जिस तरह हमने माँ की गोद में जन्म लिया है, उसी तरह मातृभाषा की गोद में जन्म लिया है, ये दोनों माताएँ हमारे लिए सजीव और अपरिहार्य हैं। रवीन्द्रनाथ टैगोर जी समेत तमाम भारतीय महापुरूषों जैसे गांधीजी, विनोबा भावे जी, नेताजी सुभाषचंद्र बोस इत्याादि ने मातृभाषा की महत्ता को समझा और उसे समझाने का प्रयास भी किया।

गांधीजी तो शिक्षा के माध्यम के लिए मातृभाषा को ही सर्वोत्तम मानते थे। उनका स्पष्ट मत था कि शिक्षा का माध्यम तो प्रत्येक दशा में मातृभाषा ही होनी चाहिए। उनकी इच्छा थी कि भारत के प्रत्येक प्रदेश में शिक्षा का माध्यम उस प्रदेश की भाषा को होना चाहिए। उनका कथन था 'यदि राष्ट्र के बालक अपनी मातृभाषा में नहीं, अन्य भाषा में शिक्षा पाते हैं, तो यह उनके ऊपर अन्याय समान है। इससे उनका जन्मसिद्ध अधिकार छिन जाता है। विदेशी भाषा से बच्चों पर बेवजह जोर पड़ता है और उनकी सारी मौलिकता नष्ट हो जाती है। इसलिए किसी विदेशी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाना मैं राष्ट्र का बड़ा दुर्भाग्य मानता हूं।' गांधीजी ने इस संबंध में 1909 ई. में 'स्वराज्य' में अपने विचार प्रकट किए हैं। उनके अनुसार हजारों व्यक्तियों को अंग्रेजी सिखलाना उन्हें गुलाम बनाना है।' गांधी जी विदेशी माध्यम के कटु विरोधी थे। उनका मानना था कि विदेशी माध्यम बच्चों पर अनावश्यक दबाव डालने, रटने और नकल करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करता है तथा उनमें मौलिकता का अभाव पैदा करता है। यह देश के बच्चों को अपने ही घर में विदेशी बना देता है। उनका कथन था कि 'यदि मुझे कुछ समय के लिए निरकुंश बना दिया जाए तो मैं विदेशी माध्यम को तुरन्त बन्द कर दूंगा।' गांधी जी के अनुसार विदेशी माध्यम का रोग बिना किसी देरी के तुरन्त रोक देना चाहिए। उनका मत था कि मातृभाषा का स्थान कोई दूसरी भाषा नही ले सकती। उनके अनुसार, 'गाय का दूध भी मां का दूध नहीं हो सकता।'

देश के विभिन्न प्रदेशों का भ्रमण करने के दौरान भी गाँधी जी हर अवसर पर शिक्षा में मातृभाषा के महत्व को उजागर करने का अभियान चलाते रहे। 15 अक्टूबर 1917 को बिहार के भागलपुर शहर में छात्रों के एक सम्मेलन में भाषण करते हुए उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा –''मातृभाषा का अनादर माँ के अनादर के बराबर है। जो मातृभाषा का अपमान करता है, वह स्वदेश भक्त

कहलाने लायक नही है। बहुत से लोग ऐसा कहते सुने जाते हैं कि 'हमारी भाषा में ऐसे शब्द नहीं जिनमें हमारे ऊँचे विचार प्रकट किये जा सकें। किन्तु यह कोई भाषा का दोष नहीं। भाषा को बनाना और बढ़ाना हमारा अपना ही कर्तव्य है। एक समय ऐसा था जब अंग्रेजी भाषा की भी यही हालत थी। अंग्रेजी का विकास इसलिए हुआ कि अंग्रेज आगे बढ़े और उन्होंने भाषा की उन्नति की। यदि हम मातृभाषा की उन्नति नहीं कर सके और हमारा यह सिद्धान्त रहे कि अंग्रेजी के जरिये ही हम अपने ऊँचे विचार प्रकट कर सकते हैं और उनका विकास कर सकते हैं, तो इसमें जरा भी शक नहीं कि हम सदा के लिए गुलाम बने रहेंगे। जब तक हमारी मातृभाषा में हमारे सारे विचार प्रकट करने की शक्ति नहीं आ जाती और जब तक वैज्ञानिक विषय मातृभाषा में नहीं समझाये जा सकते, तब तक राष्ट्र को नया ज्ञान नहीं मिल सकेगा।''

महान वैज्ञानिक एवं हमारे पूर्व राष्ट्रपति डॉ. अब्दुल कलाम ने स्वयं के अनुभव के आधार पर कहा है, "मैं अच्छा वैज्ञानिक इसलिए बना, क्योंकि मैंने गणित और विज्ञान की शिक्षा मातृभाषा में प्राप्त की।" अंग्रेजी भाषा की पढ़ाई में अधिक मेहनत करनी पड़ती है। मेडिकल या इंजीनियरिंग पढ़ने हेतु पहले अंग्रेजी सीखनी पड़ती है। पंडित मदन मोहन मालवीय अंग्रेजी के ज्ञाता थे। इसके बावजूद उन्होंने कहा था कि मैं 60 वर्ष से अंग्रेजी का इस्तेमाल करता आ रहा हूँ, परन्तु बोलने में हिन्दी जितनी सहजता उसमें नहीं आ पाती। यह बात तो स्पष्ट है कि मातृभाषा सीखने, समझने और ज्ञान की प्राप्ति में सरल है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के शिक्षा विज्ञान और संस्कृति संगठन (यूनेस्को) ने भी शिक्षा में मातृभाषा और स्थानीय भाषाओं के उपयोग को महत्व प्रदान हुए कहा है कि ''यह स्वतः सिद्ध है कि बच्चे के लिए शिक्षा का सबसे उत्तम माध्यम उसकी मातृभाषा है। मनोवैज्ञानिक आधार पर यह सार्थक चिह्नों की ऐसी प्रणाली है जो अभिव्यक्ति और समझ के लिए उसके मस्तिष्क में स्वयंचालक के रूप में काम करती है, उसके साथ एकात्मक होने का साधन है, शैक्षिक आधार पर वह मातृभाषा के माध्यम से किसी अन्य माध्यम की अपेक्षा तेजी से सीखता है।'' (युनेस्को 1953—11)

अंग्रेजी भाषा सीखने में कोई बुराई नहीं है, भाषा सीखना अच्छी बात है और गुणकारी भी है। भाषा हमें एक नये संसार में प्रवेश कराती है लेकिन मातृभाषा या जनभाषा की उपेक्षा कर शिक्षा के माध्यम से उसे हटाकर पराई भाषा के माध्यम से शिक्षा दी जा रही है और जिस तरह के भाषा—संस्कार डाले जा रहे हैं, वह खतरनाक है। बालक न अंग्रेजी जान पा रहा है न मातृभाषा। अंग्रेजी से कोई विरोध नहीं है, वह जरूर सिखाई जानी चाहिए लेकिन सिर्फ एक भाषा के रूप में, जब कोई विदेशी भाषा हमारी शिक्षा का माध्यम हो जाती है, तो सारी समस्याएं वहीं से शुरू हो जाती हैं। शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रारंभिक शिक्षा किसी विदेशी भाषा में ग्रहण करने पर व्यक्ति अपने परिवेश, परम्परा, संस्कृति व जीवन मूल्यों से दूर हो जाता है और अपने पूर्वजों से प्राप्त ज्ञान, शास्त्र, साहित्य आदि से दूर होकर अपनी पहचान खो देता है, जबकि शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य यह है कि वह हमारी संस्कृति, सभ्यता को परिमार्जित कर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचा कर देश के स्वाभिमान को प्राचीन इतिहास से भी ऊंचा बनाए। भाषा और संस्कृति केवल एक भावात्मक विषय नही है, बल्कि वर्तमान युग में किसी भी देश की शिक्षा, ज्ञान—विज्ञान और तकनीक का विकास वहां की मातृभाषाओं या जनभाषाओं के विकास के साथ जुड़ा है। किसी भी भाषा का विकास वहां की भाषागत नीतियों के साथ और उस भाषा को बोलने वालों की भाषागत चेतना पर निर्भर करता है।

प्रायः आजकल सुनने में मिलता है कि अंग्रेजी माध्यम के कुछ विद्यालयों में विद्यालय परिसर में हिन्दी या मातृभाषा में बात करते पाए जाने पर दंडित किया जाता है। कुछ विद्यालयों में तो माता—पिता की शैक्षणिक योग्यता को बच्चों के प्रवेश का आधार बनाया जाता है, जो कि एकदम गलत हैं। हम सब भारतीयों को यह समझने की जरूरत है कि शिक्षा के अधिकार का सवाल मातृभाषा में शिक्षा के साथ जुड़ा है। अपनी भाषा में शिक्षा प्राप्त करना बच्चे का अधिकार है, उस पर दूसरी भाषा लाद देना उसके स्वाभाविक विकास में बाधा डालना भी है। मातृभाषा में शिक्षण मनोवैज्ञानिक दृष्टि से व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक है।

हमारे शिक्षा शास्त्रियों और तमाम विद्वानों को इस

पर मनन करने की गहन आवश्यकता है कि आखिर क्या बात है कि शिक्षा और ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्रों में केवल वही देश आगे जा रहे हैं जहाँ शिक्षा मातृभाषा में दी जा रही है। जर्मनी, फ्रांस, इजराइल ,चीन, जापान, कोरिया, रूस, जैसे देश अँग्रेजी माध्यम की शिक्षा के बिना हम से कहीं आगे हैं। वे इसी लिए आगे हैं कि उन्होंने अपनी शिक्षा को विदेशी–भाषा–रोग से ग्रस्त नहीं होने दिया। यहाँ तक कि अमेरिका, कनाडा, न्यूजीलैंड जैसे अँग्रेजी भाषी देशों में भी बच्चे को उसकी मातृभाषा में स्कूली शिक्षा देने की पूरी कोशिश की जाती है। इन देशों में लाखों ऐसे स्कूल हैं जिनमें शिक्षा का माध्यम अँग्रेजी नहीं है। अमेरिका के शहर बोस्टन की एक मिसाल तो आँखें खोलने वाली है। वहाँ एक स्कूल में शिक्षा का माध्यम अँग्रेजी न होकर उस क्षेत्र के अफ्रीकी मूल के निवासियों की स्थानीय भाषा थी। लेकिन उन्होंने प्रयोग के तौर पर स्कूल की शिक्षा का माध्यम अँग्रेजी कर दिया। दो–तीन साल में ही वहाँ ऐसे बुरे नतीजे सामने आए कि उस स्कूल की शिक्षा फिर से स्थानीय भाषा में कर दी गई।

दुनिया भर के समस्त शिक्षाविदों के साथ साथ शिक्षा पर शोध करने वाली एनसीईआरटी के अनुसार भी बच्चों के सीखने का सर्वोत्तम माध्यम बच्चे के परिवेश की भाषा ही है। संविधान का अनुच्छेद 350 भी प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की व्यवस्था की बात करता है। पर इसके बावजूद गली–गली में अंग्रेजी माध्यम के स्कूल खुल रहे है और सर्वत्रा अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा को ही बढ़ावा दिया जा रहा है। हमारे माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भी माता पिता को स्कूली शिक्षा माध्यम को चुनने के फैसले को देने वाले निर्णय में माना कि बच्चे के सीखने का सर्वोत्म माध्यम मातृभाषा ही है। ये रोजगार के अवसरों में अंग्रेजी की अनिवार्यता ही है जिसने हर एक को अंग्रेजी में पढ़ने के लिए मजबूर किया है। हमारे देश के संविधान निर्माताओं ने अंग्रेजी को एक अल्प अवधि के लिए ही लागू किया था । उन्हें अनुमान था कि संविधान लागू होने के 15 वर्ष के अन्दर हिन्दी देश के सभी राज्यों में स्वीकार कर ली जाएगी और फिर देश में काम काज की भाषा अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी हो जाएगी, किंतु कुछ परिस्थितियों के कारण हिन्दी कामकाज की अधिकारिक भाषा नहीं बन पायी और आज व्यवस्था ही ऐसी बन गई है कि प्रायः अधिकांश अभिभावक अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम स्कूलों में ही डालना पसंद कर रहे हैं। अभिभावकों की भी मजबूरी यह है कि हिन्दी माध्यम या क्षेत्रीय माध्यम के अच्छे स्कूल बचे ही कहां हैं ? साथ ही सवाल यह भी है कि इस अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा व्यवस्था में बच्चे कुछ सीख भी पाते है क्या ? शिक्षा का अर्थ मनुष्य की चेतना को जागृत कर ज्ञान को व्यवहारिक बनाना है। वही हमारे बच्चे बिना व्यवहारिक अर्थ समझे रटते चले जाते है। वे रट–रट कर छोटी कक्षा से बड़ी कक्षा तक पास कर जाते हैं, पर मौलिक ज्ञान सृजन नहीं कर पाते। यह अंग्रेजी माध्यम व्यवस्था का ही परिणाम है कि हमारे विद्यार्थियों की पढ़ने की रूचि पाठयपुस्तक तक ही सिमट कर रह गयी है। हमारे बच्चों ने 'रटने' को ही 'ज्ञान' समझ लिया है और 'अंग्रेजी बोलने की योग्यता को (इंग्लिश स्पीकिंग)' को ही 'शिक्षा' । इसका ही परिणाम है कि हमारे देश में प्रतिभा होने के बावजूद हमसे छोटे छोटे देश हमसे ज्यादा नोबल ले जाते है और हम उनसे अत्यंत पीछे है।

आज समय की मांग यही है कि हमारे शिक्षाविद् और विद्वान इस तथ्य पर गंभीरता से विचार करें कि शिक्षा का माध्यम मातृभाषा या जनभाषा ही होना चाहिए, क्योंकि भाषा केवल सीखने का माध्यम ही नहीं, संस्कृति और सभ्यता की भी वाहक होती है।

देहरादून का पक्षी संसार

नबनीता सेन
पत्नी डा. कौशिक सेन
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

देहरादून शहर की अंतहीन व्यस्त जीवनचर्या मे कभी–कभी अचानक शान्ति और एकान्त की कामना जाग्रत होती है। इस प्रकार निःस्तब्ध एकांत के आनन्द के लिये घाटी में पर्वत श्रृंखलाओं में विचरण से सर्वोत्तम क्या हो सकता है मनोहरी पर्वत श्रृंखलाओं से घिरे हुए, देहरादून में कई सघन जंगल है और इन जंगलों में दुनिया के कुछ विस्मयकारी नभचरों का निवास है। पिछलें कई वर्षो से देहरादून घाटी और उसके चारों तरफ किये गये लघु अभियानों ने हमें एकान्त, शान्ति व चरम आनन्द तो दिया ही है परन्तु साथ ही पक्षी विहार की हमारी रूचि को प्रज्जवलित भी किया है।

शहर में घंटे–आधें घंटे की यात्रा, आपको शहर के बाहरी क्षेत्रों पर स्थित ऐसी कई छोटी–छोटी जगहों पर ले जा सकती है जो एकदम हरे भरे तो हैं ही और जिनका दृश्य मनोहरी हैं। इन जगहों की सुंदरता आपको निश्चित रूप से अचंभित करेंगी। किमारी, थानो, करवापानी, पुरूकुल, सहस्त्रधारा, मालदेवता और आसन बैराज पक्षी विहार के लिये हमारे मनपसंद स्थल है। राजाजी नेशनल पार्क, जो कि यहाँ से बहुत दूर नही है, पक्षी विहार के लिये अन्य पसंदीदा स्थल है। सप्ताहंत आते ही हम अपने कैमरे व दूरबीन लेकर खूबसूरत नभचरों को देखने व तस्वीरों में कैद करने निकल पड़ते हैं।

हिमालय और शिवालिक के मध्य दून घाटी में बॉस, पनांग, साल, सेमल, शीशम, शीरीस, झींगन, बोहरा, धौरी, बाक्लि, सैन, हल्दु, चमेली, करोंदी और अन्य वृक्षों के सघन वन कई जगहों पर देखे जा सकते हैं। जैसे–जैसे सड़क ऊँचाई ग्रहण करती है परिदृश्य बदलता है और इन शीतोष्ण क्षेत्रों में उच्च शिखरीय वृक्ष जैसे पाईन, मैपल, रोडेन्ड्रोन बहुतायात में पाये जाते हैं। सघन वानस्पतिक क्षेत्रों की अधिकता आश्चर्यजनक जैव विविधता और कई नदियों की सनिकटता के कारण देहरादून घाटी को पक्षियों के लिए स्वर्ग की उपमा दी जा सकती है। वर्तमान मे उत्तराखण्ड मे पक्षीयों की लगभग 600 प्रजातियाँ हैं, जिनमे से 400 प्रजाति केवल देहरादून घाटी में देखी जा सकती है।

जब हम किसी क्षेत्र की जैव–विविधता के बारे में चर्चा करते है तो उस क्षेत्र की जलवायु, उस जैव–विविधता का मुख्य कारक होती है। देहरादून भी इस मामले में अपवाद नही है। हिमालय की तलहटी में बसे होने के कारण देहरादून की जलवायु सामान्य है। ठिठुरती सर्दियां, गरम ग्रीष्म, बरसाती मानसून और आनन्दायक बसंत देहरादून की मौसमी विशेषताएं हैं। घाटी में उतार–चढ़ाव का भी प्रभाव दिखायी देता है। जितना ऊँचा आप चढ़ जाते है उतनी ज्यादा ठण्ड का आभास होता है। गर्मियों में तापमान 18 से 40^0 सेल्सियस तक होता है। जबकि सर्दियों में पारा 4^0 व 5^0 सेल्सियस से 23^0 सेल्सियस तक जाता है। देहरादून में मानसून का अलग ही मिजाज हैं। यहाँ वर्षा का वार्षिक औसत 2073.3 मिमी का है। बरसात का मौसम जून से सितम्बर तक होता है। यद्यपि सर्दियों में भी दून घाटी में दिसम्बर और जनवरी में थोड़ी वर्षा होती है, परन्तु अधिकतम बारिश जुलाई और अगस्त के महीने में होती है। घाटी में इस प्रकार मौसमी विविधता के कारण अलग–अलग समय में विविधतापूर्ण पक्षी दिखायी देते है।

जैसे ही सर्द हवाओं का आभास होना शुरू हो जाए जंगलो में सर्दी के मौसम के पक्षी आना प्रारांभ कर देते है और कभी–कभी तो यह झुण्डों में आते हैं। यदि आप पक्षीयों को अपने कैमरे में कैद करना चाहते है तो यही समय है अपने कैमरों के साथ जंगल में विचरण का। जैसे सर्दी बढ़ती जाती है आसन और डाकपत्थर बैराज की झीलों में पेल आर्कटिक व उच्च हिमालय शिखरों के प्रवासी पक्षी आने लगते हैं। इनमें लाल सुर्खाब (रूडी शेलडक), सुर्खाब (शेलडक), कलगीदार बत्तख , हंस या बिर्वा (बार हेडेड गुस) , सींक पर बत्तख या दिग हंस (नार्थन पिनटेल), लाल चोंच बत्तख (रेड क्रेस्टड पोचार्ड) आदि प्रमुख है। उच्च हिमालयी शिखरों से घाटी आने वाले प्रवासी पक्षीयों में नीलतौ (रूफस बैलीड नीलतवा), छोटी नीलतवा गांगुला (हिमालयन रूबी थ्रोट), रूफस ब्रेस्टड एसेंटर, ब्लेक थ्रोटेड एसेंनटर, चेस्टन बैलीड

रॉकथ्रस, तीसी (चेस्टनेट हैडेड प्रेसिया), नेपाल रेन बैबलर, क्रिमसन सनबर्ड, ब्लैक थ्रोटेड सनबर्ड, फायर टेलु सनबर्ड, वार्बलर्स बुष वार्बलर्स आदि है। ध्यान देने योग्य है कि इनमे से कुछ पक्षी आस–पास से ही विस्थापित होते है। पक्षीयों की चहचहाट से भरपूर विविध वृक्षों व झाड़ियों से गुजरतें हुए शीत ऋतु के दिन मस्ती मजे से भरपूर आनन्दायक होते हैं।

चाहे वह दीप्त अंगार से चमकते जंगली फूल (पलाश) या चमकते सुनहरें बरसाती पेड़ (अमलतास), ग्रीष्म ऋतु का आगमन जंगलों को रंगो से भर देता है। इस ऋतु मे भी विविध पक्षी प्रवास में आते हैं। ग्रीष्म ऋतु में पक्षीयों को देखने का उपयुक्त समय प्रभातकाल और सांयकाल है जबकि पक्षी सक्रिय रहते हैं। स्पाट विंग स्टारलिंग, ब्लुथ्रोटड ब्लु लाईकैचर, ब्लुकैड रॉकथ्रस, वेज टेल्ड ग्रीन पीजन, पाईड बुशचार और मिनीवेटस की चार प्रजातियॉ ग्रीष्मकाल में दिखायी देने वाले कुछ पक्षी है। घाटी के चारों ओर सघन वन, ड्रोंगो कोयल, कामन हाक कोयल, युरेशियन हाक कोयल मंत्रमुग्ध कर देने वाली सुरीली ध्वनियाँ से प्रतिध्वनित होते रहते हैं। चूंकि यह समय पक्षीयों का प्रजननकाल भी होता है तो इस दौरान वे घोंसले में रखे अपने बच्चों के लिए भोजन की व्यवस्था में भी व्यस्त रहते है। प्रवासी पक्षीयों के अतिरिक्त घाटी में ही निवास करने वाले पक्षीयों को सभी ऋतुओं में वर्ष भर देखा जा सकता है। इनमें प्रमुख है–रेड बिल्ड लियोथ्रिक्स, ब्लुथ्रोटेड बोर्वड, रस्टी चिक्ड, स्कीमीटर बैबलर, व्हाईट ब्राऊड स्कीमीटर बैबलर, ब्लैक चिन्ड बैबलर, ओरियन्टल व्हाईट आई, स्ट्रीक्ड लॉफिंग थ्रस, व्हाईट क्रेस्टड लाफिंग थ्रस, स्पाटड् आउलेट, एशियन बैरेड आऊलेट, वेरडीटर लाईकेचर आदि।

देहरादून, जिसे कभी खूबसूरत पक्षीयों और वन्यजीवों की सुरक्षित पनाह समझा जाता था, अब धीरे–धीरे अपनी पुरानी पहचान खो रहा है। अनियंत्रित निर्माण, निरन्तर बढ़ता प्रदूषण चारो तरफ फैला कूड़ा, गर्मियों मे लगातार बढ़ती जंगल की आग के कारण देहरादून का पारिस्थिति तंत्र निरन्तर दबाव में है। विकास के नाम पर यह मदान्ध दौड़ यदि ऐसे ही जारी रहती है तो जल्दी ही घाटी में नभचरों की संख्या तीव्रता से घटेगी। भारी मुनाफे की चाह वाली इस दौड़ को रोकने का कोई न कोई तरीका होना चाहिए ताकि पारिस्थितिकी सन्तुलन बनाया व पुर्नस्थापित किया जा सके।

दूनवासियों में वन्यजीव संरक्षण के प्रति बढ़ती हुई जागरूकता निश्चित ही उम्मीद की किरण दिखाती है। यदि हम में से कुछ लोग, चाहे वे पक्षीयों में रूचि रखते है या वन्यजीवों में यदि युवा पीढ़ी में जागरूकता फैला सके तो भविष्य निश्चित ही अलग होगा जिसमें सीमेंट के जंगल के बजाए प्राकृतिक वनसंपदा की अधिकता होगी।

पौराणिक उत्तराखण्ड की नदियाँ

डॉ. राकेश मोहन नौटियाल
वी.श.के.च. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
डाकपत्थर, देहरादून

नदियाँ जो कि महाहिमालय से जन्म लेती हैं, उत्तराखण्ड के प्राकृतिक स्वरूप तथा गंगा के मैदान बनाने में कारक रही हैं। हिमालय से तीन जल समुदाय जन्म लेते हैं। पहला–उत्तरपूर्व में ब्रह्मपुत्र, दूसरा–उत्तर पश्चिम में सिन्धु–सतलज और तीसरा–मध्य में गंगा काली समुदाय। तीसरे समुदाय की नदियाँ उत्तराखण्ड में ही जन्म लेती हैं और इससे होकर आगे बढ़ती हैं। इस जल समुदाय का नेतृत्व तीन बड़ी नदियाँ करती हैं–पहली यमुना, दूसरी गंगा तथा तीसरी काली (शारदा)। ये तीनों पनढाल अन्ततः गंगा में ही मिलते हैं। हिमालय की ऊँची–ऊँची पहाडियों में हिम वृष्टि का हिम जम कर बर्फ बन जाता है, शनैः –शनैः वह उष्ण प्रदेश में पहुँचकर, हिमानियों का रूप धारण कर लेता है। इन्ही हिमानियों से हिमालय की अनेकों नदियां निकलती हैं। उत्तराखण्ड की नदियों में सबसे पवित्र नदी गंगा है जिसका जल समस्त भारत ही नहीं अपितु विश्व में पूज्य माना जाता है। कहा जाय तो स्थानीय जन जीवन में ही नहीं अपितु सांसारिक जीवों में भी केदारखण्ड के जल का अत्यन्त महत्व है। संसार संतप्त मानव इस जल को अपने घर में पहुँचा कर अद्भुत शान्ति का अनुभव करते हैं। यहाँ की नदियों, तड़ागों और निर्झरों के नामोच्चारण तथा जलकणों के स्पर्श से तो दैहिकादि बाधाएँ भी भाग जाती हैं। नदियों के जल से पापात्मा भी पवित्र हो जाते हैं– ***तत्पयः स्पर्शमात्रेण शुद्धोभवति तत्क्षणात्।*** उत्तराखण्ड में अनेक नदी, गाड[1] निकलते हैं जिनको गंगा नाम दिया गया है।

मानसखण्ड पुराण के अनुसार मानसरोवर उत्तराखण्ड की तथा भारत की अन्येक नदियों का मूल स्रोत है। उत्तराखण्ड में मुख्यतया तीन वर्गों की नदियाँ बहती हैं। गंगा, यमुना तथा काली (शारदा)। इनमें गंगा नदी का क्षेत्र सबसे विस्तृत है जिसमें अनेक नदियाँ आती हैं। इसमें मुख्यतः भागीरथी, जाड गंगा, भिल्लंगना, मन्दाकिनी, अलकनन्दा, पिण्डर, धौली गंगा आदि नदियाँ आती हैं। इसके साथ ही यमुना की पनढाल में मुख्य नदी यमुना है, जिसमें टोन्स (तमसा) तथा अन्य छोटी नदियाँ मिलती हैं। यहाँ का तीसरा पनढाल काली (शारदा) का है जिसमें मुख्यतः सरयू, रामगंगा, गौरी, पूर्वधौली आदि नदियाँ आती हैं। इसके अतिरिक्त कोसी तथा खोह नदियाँ भी काली (शारदा) के पनढाल में ही बहती हैं। ये सभी नदियाँ अन्ततः गंगा में ही मिल जाती हैं। गंगा भारतवर्ष की पवित्रतम् नदी है यह केदार हिमालय के दक्षिण प्रान्त त्रिलोक प्रसिद्ध गंगोत्री क्षेत्र से निकलती है– ***यत्र गंगाया महाभागे हिमवद्धक्षिण स्थले, गंगोत्तरमिति ख्याते त्रिशु लोकेशु विश्रुतम्।***

पुराणों के अनुसार ब्रह्मपुरी मेरु में गंगा सीता, अलकनन्दा, चक्षु और भद्रा इन चार धाराओं में विभक्त हुई और इनमें सीता नाम की धारा पूर्व की ओर क्षीर सागर में, अलकनन्दा दक्षिण समुद्र में, चक्षु पश्चिम समुद्र में, और भद्रा उत्तरी समुद्र में मिली। गंगा महादेव की जटा से निकल कर पूर्वी समुद्र में गिरी– ***ततः प्राप्तगिरि पुण्यं ततः पूर्वाणं प्रति।*** हरिवंश पुराण के अनुसार भारत के उत्तर दिशा में क्षीर सागर था, विष्णु देवताओं की स्वर्ग विदाई के अनन्तर उस समुद्र में गए थे। पौराणिकों के अनुसार आज से 50 करोड़ वर्ष पूर्व अथवा उससे भी पूर्व जल प्लावन से जलमग्न भारतीय धरा का जल पौराणिक काल तक सूखकर चारों दिशाओं में सिमट गया था। गंगा जो वास्तव में गंगा देवप्रयाग नामक स्थान में भागीरथी तथा अलकनन्दा के संगम के उपरान्त कहलाती है, परन्तु वास्तव में भगीरथ द्वारा लाई गई तथा गंगोत्री नामक स्थान पर जो गंगा नाम से अवतीर्ण हुई है वह भागीरथी नामक नदी है।

[1]उत्तराखण्ड में छोटे–छोटे प्राकृतिक नालों को गाड कहा जाता है।

भागीरथी नदी का मूल उद्‌गम गोमुख नामक स्थान है। यही उत्तर पश्चिम की और बहना प्रारम्भ करती है। अनेक विद्वानों जिनमें मैक्रेण्डिल मुख्य रूप से हैं, ने गंगा का उद्‌गम स्थान अनिश्चित बताया है। पुराणों ने पृथ्वी पर गंगा उद्‌गम को गंगावतरण के रूप में कथा का स्वरूप दिया है जिसके अनुसार गंगा तीन स्वरूपों में प्रदर्शित की गई है। पौराणिक गाथा के अनुसार गंगा विष्णुपदी अर्थात विष्णु के पैर के अंगूठें से निकलकर ब्रह्मा के कमण्डल में आई थी तथा भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर यह पृथ्वी पर आने से पूर्व शिवजटा में पहुँची, परन्तु उपरोक्त कथा को मात्र भ्रामक ही कहा जा सकता है। यद्यपि जो बात आधिदैविक जगत में सत्य है वह आधिभौतिक जगत में भी सत्य होगी, क्योंकि हमारा यह जगत आधिदैविक जगत का प्रतिरूप है। गंगा भगवान नारायण के चरणों से निकलकर भगवान शिव के मस्तक पर गिरी और वहाँ से पृथ्वी पर आई है, यह अधिदैविक जगत की घटना हमारे जगत में भी सत्य है। श्री बद्रीनारायण से आगे नारायण पर्वत है, नारायण पर्वत के नीचे (चरण प्रान्त) से ही अलकनन्दा निकलती है जो सतोपंथ होकर बद्रीनाथ आती है। वहीं नारायण पर्वत के चरण प्रान्त से भागीरथी या हिमप्रवाह चतुःस्तम्भ शिखर से मानव सुमेरु (स्वर्ण पर्वत) के पास होते हुए शिवलिंग शिखर पर आता है। यह शिखर गोमुख के दक्षिण में है। इससे नीचे उतरकर हिमप्रवाह से गोमुख में गंगा की धारा प्रकृति में व्यक्त होती है। अतः गंगावतरण जिसमें आधिदैविक तत्व है का आधिभौतिक विचारों से भी तारतम्य उचित ही है। गंगा को विष्णुपदी के अतिरिक्त जाह्नवी आदि नामों से भी पुराणों में पुकारा गया है। जाह्नवी (जाडगंगा) जो नीले पानी के साथ भैरों घाटी में जाँगल्य नामक स्थान पर गंगा में मिलती है। यह नदी तिब्बत के पठार से भारत–वर्ष में प्रवेश करती है। विमलचरण लाहा के अनुसार वस्तुतः जाडगंगा (जाह्नवी) के जल का परिमाण भागीरथी से अधिक था। जब जाह्नवी में भागीरथी का अस्तित्व विलीन हो गया तो भगीरथ ने पुनः तपस्या कर जह्नु ऋषि के जह्नु प्रदेश से भागीरथी को पुनः प्राप्त किया। शायद तब से दोनों की स्वीकृति से गंगा का नाम भागीरथी भी हो गया था। गढ़वाल के देवप्रयाग नामक स्थान पर जहाँ भागीरथी तथा अलकनन्दा अर्थात गंगा के दो स्वरूपों का संगम होता है, के उपरान्त ही यह नदी गंगा कहलाती है।

अलकनन्दा जिसे पुराणों में मुख्य गंगा का गौरव प्राप्त है– ***अलकनन्दा तदा नाम गंगाया प्रथम स्मशतम्*** का उद्‌गम बद्रीनाथ के निकट गन्धमादन पर्वत है। गन्धमादन जिसे बद्रीनाथ के समीप माना जाता है, को तिब्बत के पठार से समीकृत किया जा सकता है। अलकनन्दा जिसका उद्‌गम गन्धमादन पर्वत से है आगे चलकर विष्णुप्रयाग नाम स्थान पर धौली गंगा से मिलती है। धौली गंगा जो भारत चीन सीमा पर नीती दर्रे के पास निकलती है, यह अपना पानी कामेत और रैकना नामक हिमानियों से प्राप्त करती है। विष्णु प्रयाग के पास एक पवित्र विष्णु कुण्ड होने से इसके कुछ मार्ग को विष्णुगंगा भी कहते हैं। यह अपने मार्ग मे रुद्रगंगा, गरूड़गंगा, पातालगंगा और विरहीगंगा से मिलती है। अलकनन्दा से आगे चलकर नन्द प्रयाग में नन्दाकिनी से तथा कर्णप्रयाग में पिण्डर नदी से संगमित होती है। नन्दाकिनी जो त्रिशूल पहाड़ी के पास पश्चिमी ढालों के हिमगारों से निकलती है, इसका एक नाम नन्दा भी है। पिण्डर जो कर्णप्रयाग के समीप अलकनन्दा में मिलती है का उदगम पिण्डारी हिमगार से होता है। यह हिमगार नन्दादेवी के समीप है। तदुपरान्त रुदप्रयाग में मन्दाकिनी नामक नदी अलकनन्दा में मिलती। यह केदारनाथ के चौराचोरी हिमगार से निकलती है। मन्दाकिनी को काली गंगा भी कहा जाता है। पालि परम्परा में भी मन्दाकिनी अलकनन्दा की सहायक नदी ही मानी जाती है। इसके उपरान्त भागीरथी अलकनन्दा का संगम होता है तथा आगे चलकर व्यासघाट में नयार नदी गंगा में मिलती है।

यमुना जो उत्तराखण्ड में दूसरे पनढाल का नेतृत्व करती है, में क्रमशः ऋषिगंगा, हनुमानगंगा, रूपिणी तथा सुपिणी नामक नदियाँ मिलती हैं। यमुना जो गढ़वाल की एक प्रसिद्ध तथा ऐतिहासिक नदी है का उद्‌गम बंदरपूँछ की पहाड़ियों से होता है तथा यमुनोत्री नामक स्थान पर दृष्ट होती है। पुराण ही क्या वैदिक साहित्य भी यमुना के महत्व का वर्णन करता है। ऋग्वेद में कहा गया है कि यमुना तट पर ही त्रित्सु एवं सुदास ने शत्रुओं पर विजय प्राप्त की थी। यमुना ही वह नदी है जो वैवस्वत मनु की बहन थी। यह वैवस्वत आदित्य और संज्ञा की पुत्री थी। श्री विमलचरण लाहा के अनुसार यूनानी लेखकों ने जिस इरेनेबोस नदी का

नामोल्लेख किया है वह हिरण्यबाहु नदी यमुना ही है। यमुना की सहायक नदियों में तमसा (Tons) नदी सबसे बड़ी नदी मानी जाती है। इसी के तट पर वाल्मीकि ऋषि का आश्रम था। संस्कृत साहित्य में अनेक स्थानों पर गंगा तथा तमसा के बीच दूरी न होने के प्रमाण प्राप्त होते हैं। अतः कहा जा सकता है कि तमसा या वर्तमान टोन्स नदी गढ़वाल की ही नदी है। पुराणों तथा वाल्मीकि रामायण के अनुसार वाल्मीकि आश्रम किसी ऐसे प्रदेश में होना चाहिए जहाँ तमसा, गंगा और यमुना तीनों नदियाँ बहती हों और यह संयोग उत्तराखण्ड के गढ़वाल में पूर्णतः विद्यमान है। इस प्रकार से पौराणिक तमसा गढ़वाल की ऐतिहासिक नदी है।

उत्तराखण्ड में तीसरा पनढाल काली (शारदा) नदी का है जिसमें सरयू, रामगंगा, गौरी, पूर्वधौली आदि नदियाँ आती हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण सरयू नदी है। जो कैलाश मानसरोवर से निकली हुई मानी जाती है– ***कैलाश पर्वते रामः मानसः निर्मितं परम्, ब्रह्मणा नर शार्दूला तेनेदं मानसं सरः, तस्मांद् सुस्रात साऽयोध्यामपगृहते, सरः प्रवृता सरयूः पुण्यः ब्रहमसरच्युता।*** सरयू जो एक ऐतिहासिक नदी है का वर्णन केवल पुराणों में ही नहीं अपितु ऋग्वेद तथा महाभारत में भी आया है। यह नदी कोशल देश को दो भागों दक्षिण तथा उत्तर कोशल में बाँटती है।

यद्यपि सारा उत्तराखण्ड गंगा का पनढाल है। यहाँ के प्रायः सभी स्थानों पर वर्षा जल भिन्न–भिन्न नालों, गाडों या शाखा नदियों से होकर गंगा में जाता है। अतः यहां के निवासी भी अपनी नदियों को किसी न किसी गंगा का नाम दे देते हैं। पुराणों में गंगा, यमुना तथा काली (शारदा) के अतिरिक्त भी अनेक नदियों का वर्णन है जो कहीं न कहीं गंगा की सहायक नदी बनी हैं। ये सभी नदियां निम्नवत् हैं– पिण्डर, निगमालय, नन्दगंगा, हरिणी, वरुणा, असी, भिलंगना, हिरण्यबाहु, तामसी, शैव्या, हिरण्यसैकता, हैमवती, पुण्य, तमसा, बालखिल्य, सुन्दरी, चन्द्रतोया, धेनुगंगा, देविका, भद्रदा, शुभ्रा, मातंगी कालिका, मतिविक्रमा, सरस्वती, हरिद्रा, सुरसुता, प्रमोदिनी, ताम्रवर्णी, नंदिनी, मोक्षवती, कुमुद्वंवति, शंकरवल्लभा, रम्भा, धमधराधार, वेतृवती, केलिका, कुहु, त्रिपथा, चन्द्रवती, जुहवन, देवगर्भा, गंगाप्रवाह, देवजुष्ट्रा, ब्रह्मनद, विष्णुनद, रमा, ब्रह्मपुत्री, वालवती, वेगवर्णा, देवलकी, भुवनेश्वरी, भोगवती, नाक्षत्री, पंचवरा, चामरादोलिनी, नवला, वर्णिजा, त्रिवेणी, सीता, अलकनन्दा, चक्षु, भद्रा, बाणगंगा, धनवती, त्रिशुला, अमिता, वैनत्रैय, विभाविनी, राजेन्द्री, कपिंजला, चन्द्रतोया, मंजुकेता, अत्रिपुत्री, काण्डवी, कपिलनीरिणी, नन्दना, सुन्दरा, भूरिदेवा, रेणुभा, तरंगिणी, भद्रतरा, पीरिणी, भरणी, मेना, यशोवती, वर्षवती, खण्डवा, मेनका, सूर्यधार, श्यामला, पुष्पदन्तिका, दृषद्वती, कण्डिका, शक्तिजा, उपेन्द्रजा, हर्षवती, गौरी, वरेश्वरी, इन्द्राणी, नकुलवती, मंजुवती, रूपवती, दिग्वती, शुभानना, यशोवती, परवत्स्रजा, रजिका, माण्डूकायनी, पुण्यवती, कौशिकी, भूसूता, कटकवती, मनोहारी, देववती, मधुमती, मनोन्यनी, जीवा, गोलक्षजा, पावनीती, लौहवती, कमण्डुलुभव, मुनिगंगा, मायाविनी, लास्यगंगा, शिवश्री, ताम्रगंगा, कपिला, ब्रह्मज्वाला, सिद्धतरंगा, शुद्धतरगिणी, रुद्रभद्र, कामधारा, हेमधारा, गारुड़िगंगा, भद्रा, स्वर्णधारा, पिण्डारका, कालीनदी, कमठीनदी, वैण्या, वौधिनी, वृश्चिका तथा कृकलासी, खुचन्द्रा, नंदीजा, रथवाहिनी (रामगंगा), सुरभी, नन्दनी, जीवनदा, कौमोदकी, काश्यपी, द्रोणी, गार्गी, वेणुभद्रा, शुक्रवती, शतधारा, विल्वती, वेत्रवती, भद्रवती, शैत्रवती, कौशिकी, कर्कटी, शैवी, रम्भा, शाली, सीता, पुष्पभद्रा, सुभद्रा, शेषभद्रा, चन्द्रभद्रा, वेणुभद्रा, गुणवती, बेलवती, शत्रवती, दिगवती, पटवाती, चित्रवती, शालिवाहया, कपिला, शंखवती, सरयू, जटागंगा, कर्णादिगंगा, शूलगगां, गौरीनदी, पदमपर्णा, चक्री, पाण्डवी, एला, सुवेला, सुवटी, गण्डकी, लोहवती, सोमवती, पर्णपत्रा, गणिका, गोत्रजा, गोमती, मायावती, श्येनका, सुतारा, रोहिणी, अहीश्वरा, कालमेना, अहिवरा, भद्रतुंगा, कैतवी, बाला, रेवा, कोका, नागनारायणी, रिष्ट्रवती, सन्ध्या, सरोजा, नारायणी, चन्द्रिका, शैवी, सोमवती, दुर्गा, मधुमती, शकटी, होमवती, बहुला, भुजंगा, गौरी, फैनिला, कुनकहा, सुमेना, वृषवती, धत्री, जयन्ती, चन्द्रभागा, यक्षवती, शैलजा, रेवा, खगवती, विन्दुमती, रेवती, भैरवी, नन्दा, चर्मण्वती, सत्यवती, कालापी, बला, अर्जुनी, गुणवती, काली, चतुर्दृष्ट्रवती, रन्तिजा, दुन्दुवती, श्यामा, दिनन्जा, बंकजा, शांगरी, रोहिणी, धर्मनदी, नवा, काकनदी, चन्द्रभागा, भगवती, बौधकारिणी, शारदा, आसुरी, विल्वती, सुरभागा, एला, पाण्डवी, शतरुद्रवती,

कोटिली, वाराही, वाराटिका, चन्द्रभागा, कलावती, चन्द्रावती वामनी, मन्दिरा, वेदव्रती, तुषा, बाजर, हिमाद्री, धारा, नवग्रहा, गृहजा, ईश्वरी, अम्बिका, धर्तुरा, तौर्यत्रिका, सूष्मजा, कचगा, यक्षगा, धारा, शाकला, वृन्दा, वाणगंगा, गुल्मावती, पिंगा, गोमती, आर्यदिका, कर्णासी, वृद्धगगां, पुण्यवती, दोग्ध्री, कैलासगंगा, कामभद्रा, छाया, शेशा, मन्जिष्ठा, क्षीरनदी, लाम्बासीमा, वेदवती, कोमा, खलवती।

इन सभी नदियों में जितना महत्व गंगा, को दिया गया है उतना किसी भी नदी को नहीं दिया गया है। प्रारम्भ में गगां, किरात, गन्धर्व, नाग, यक्ष लोगों की नदी थी। आर्यों में इसकी लोकप्रियता तो काफी समय बाद बढ़ती गई थी। पुराणों में कहा गया है कि कलियुग में गंगा, को नदियों में विशेष महत्व प्राप्त है– ***द्वापरे तु कुरुक्षेत्रं कलोगंगा विशिष्यते।*** तैतरीय आरण्यक में कहा गया है कि गंगा व यमुना के मध्य रहनेवाले मुनियों को नमस्कार है वे हमारी आयु और जीवन में वृद्धि करें।

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि हिमालय की नदियाँ केवल उत्तराखण्ड ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारतवर्ष की सांस्कृतिक पहचान रही हैं, जो हिमालय की ऊँची पहाड़ियों से निकलती हैं। इन पर अनेकों हिमनद हैं जो इन नदियों का पोषण करते हैं। इस महाहिमालय और जन्संकर श्रेणियों की ऊँची ढालों और बगलों पर हिम की सैकड़ों फीट मोटी परतें हैं, जो बगल की घाटियों में स्थित हिमानियों का पोषण करती हैं। हिमानियाँ ही इन सभी नदियों का पोषण करती हैं। समस्त हिमानियाँ 5 से 16 मील तक लम्बी हैं उत्तराखण्ड भर में गंगोत्री, माणा, कोसा, खैआम, जुना, त्रिशूल, थ्रिअपका, बांका, बंगात, मिलम, पिंडारी, नन्दादेवी, वामिनी, केदारनाथ, रैकना, अलकापुरी, बाँकेबेटातोली, व्युदरखरक, रायकांठा, लंबानी, सतोपंथ आदि अनेक हिमानियाँ हैं। लीह्रद कहलाता है। रावणह्रद तथा मानसह्रद के मध्य विभीषणह्रद है। जो भारत की नदियों का जल प्रदान करती है।

सफर

श्रीमती मंजु पंत
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

पिछले वर्ष हम आपसे नहीं मिल पाए।
बेताब तो बहुत थे आपसे मिलने के वास्ते।
वर्षों पुराना आपका और हमारा साथ है, उन यादों में डूबने के वास्ते
रेत की मानिंद वक्त हाथ से सरक गया
और वक्त नहीं निकाल पाए आपसे मिलने के वास्ते।
बेताबी इस कदर बढ़ी कि बड़ी कोशिशों के बाद
इस बार हमने वक्त को वक्त से चुरा ही लिया आपसे मिलने के वास्ते।

मैं और मेरी लेखनी ऑफिस का कार्य कर रहे थे घर में बैठकर भी। इस काम ने मार डाला। कोशिश कर रहे थे कि कुछ तो हल्का हो ये काम। काम काम काम परेशान हो चुके हैं ऑफिस और घर के कार्यों से। लेखनी भी कई बार बगावत कर देती है। वो तैयार ही नही होती आगे चलने को। वो भी क्या करे। हम दोनों ही थक जाते हैं, ऊब भी जाते हैं कई बार। अब तो लगता है थोड़े दिनों के लिये कहीं ऐसी जगह चले जाएं जहां हम दोनों को कोई जानता–पहचानता न हो और न ही हम किसी को जानते–पहचानते हों। बस हों, मैं और मेरी लेखनी। हम बड़ी अच्छी–अच्छी कल्पनाएं करने लगे। एक शांत सी पहाड़ी जगह, पतली–पतली पगडंडी। पगडंडी के किनारे हम दोनों बैठे हों पैर लटकाए। बर्फ से ढके पहाड़। नीचे कलकल करती नदी। आते जाते अनजान से सैलानी। सड़क के किनारे लगी रोड साइड दुकानें और हम दोनों किसी पगडंडी के किनारे दीवार पर पैर लटकाए चुपचाप से आनंद लेते हुए उस मौसम का, उस जगह का, उस वातावरण का। वाह हमारे चेहरों पर स्वतः ही मुस्कान आ गई अपनी कल्पना पर। लेखनी ने मेरी ओर देखा चुपके से और आंखों ही आंखो में इशारा किया चलें क्या। अभी हम सोच ही रहे थे कि अचानक मोबाइल की घंटी बज उठी। उफ! ये मोबाइल। इस मोबाइल ने भी जीना मुश्किल कर रखा है। इसकी वजह से निजी और सामाजिक दोनों ही जीवन उथल–पुथल से हो गए हैं। आप कहीं भी हो कुछ भी कर रहे हों, ये दखलअंदाजी करने से हिचकिचाएगा नहीं। और फिर आपके काम के बाद आपका जो भी समय बचता है इसकी भेंट चढ़ जाता है। फेसबुक, गेम्स, व्हट्सऐप सभी कुछ तो है इसमें। बस इसी सब में उलझ जाइये। तो आपका अपना समय कहां रहा। खैर इस समय भी इसने हमारी प्यारी–प्यारी कल्पनाओं में सेंध लगा ही दी। अब सुनना तो था ही। फोन उठाया तो देखा किसी अपने का ही था। खबर मिली कि प्रकृति की गोद में स्थित शिवालय के दर्शन के बाद एक अलौकिक अनुभूति लेकर चले तो रिमझिम– रिमझिम बारिश ने स्वागत किया है। पहाड़ों में हॉल (कोहरा) लगा है। मिट्टी की सोंधी–सोंधी खुशबू आ रही है। आह ऽ ऽ ऽ ऽ ! हमने एक लंबी आह भरी हम एक दूसरे का मुंह देखने लगे अरे! ये क्या? अभी यही सब कल्पना तो हम दोनों कर रहे थे। ये अचानक ऐसे कैसे फोन आ गया। क्या भगवान जी भी ऐसा ही कुछ हमें अनुभव कराना चाहते हैं। इस समय मोबाइल भी हमें बहुत प्यारा लगा। लगा ये उतना भी बुरा नहीं है। ये नहीं होता तो हमें कैसे उस बारिश की, उस हॉल की, उस शिवालय की अनुभूति होती। और ये अपनों की बहुत सी खबर भी तो देता है। हम दोनों मोबाइल में बातें करते–करते बाहर अपने बरामदे में आ गए –

तभी लहराती–बलखाती सरसराती हवा ने
कान में आ के चुपके से सरगोशी की
क्यों चुप–चुप सी बैठी हो
किस सोच में इस कदर डूबी हो
उठो चलो बाहर इंतजार में
बाहें पसारे बेपरवाह सी जिंदगी खड़ी है
चलकर आलिंगन करो उसका
आगे बढ़ने के लिए हाथ पकड़ लो उसका
कभी–कभी बेपरवाह होना भी अच्छा होता है
कभी–कभी लापरवाह होने को जी चाहता है
सब तहजीब छोड़कर बगावत करने को मन करता है
जिंदगी जीने के लिए, जिंदगी से लड़ना भी अच्छा होता है

खैर चलो छोड़ो ये सब बेपरवाहियां—लापरवाहियां और लड़ाईयां

चलें यादों के एक प्यारे से सफर में डाल एक दूसरे के गलबहियां

मोबाइल में बात करते—करते हम टहल रहे थे। क्या पता कहीं और से अच्छा—अच्छा देखने—सुनने को मिल जाये। तभी सामने नजर गई तो देखा बादलों की आँख—मिचौली सूरज देवता के साथ। ढलते सूरज की लाल तपिश से बादलों का रंग भी लाल—लाल हो रहा था मानो बहुत गुस्से में हों या फिर बहुत अनुरागी हो गए हों। हम भी सोचने लगे पहाड़ की तरह यहां भी आज बादल थोड़े बरस ही जाएं। सूर्य देवता के प्रचंड ताप से थोड़ी राहत दिलाएं। तभी हल्की—हल्की हवा भी चलने लगी लेखनी ने मेरी ओर देखा और इशारा किया ऊपर छत में चलने का। हम दोनों चल पड़े एक—दूसरे की उंगली पकड़े छत की ओर। ऊपर जाकर देखा तो नजारा इतनी देर में बदल गया था। आप सोच रहे होंगे इतनी सी देर में नजारा कैसे बदल सकता है। अरे भई हम बताएं आपको जब हम छत में पहुंचे तो सूरज देवता पूरी तरह बादलों से ढक गए थे। उनका गुस्सा भी शायद कम हो गया था, क्योंकि अब बादल भी सामान्य दिख रहे थे इधर से उधर दौड़ लगाते हुए। हवा की सरगोशी भी धीरे—धीरे बढ़ रही थी और हमने भी मोबाइल हाथ में ले लिया वीडियो रिकॉर्डिंग करने के लिए। वैसे मोबाइल बहुत काम की चीज भी है। हवा इतनी तेज थी कि कभी—कभी तो हमें भी धक्के लग रहे थे। ऐसा लग रहा था कि हम उड़ जाऐंगे जैसे। कई बार तो मोबाइल भी छूटते—छूटते बचा उस हवा के वेग से। फिर भी हम उस मौसम का आनंद लेने और विडियो रिकॉर्डिंग करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहे थे। तभी तेज बारिश की फुहारें शुरू हो गईं। हम दोनों फिर से भागते हुए अपने बरामदे में वापस आ कर बैठ गए। उस बारिश की रिमझिम के साथ आँख—मिचौली करने के लिए। मन कहीं पीछे की ओर भागने को आतुर होने लगा, दूर बहुत दूर—मीलों पीछे।

कई बार हम एक अच्छे अवसर की तलाश में बहुत सारा वक्त जाया कर देते हैं। अच्छा अवसर आयेगा तो ये करेंगे, ऐसा खाऐंगे, ये पहनेंगे, आदि, आदि। जब भी कुछ अच्छा होता है हम ये सोचते हैं नहीं अभी नहीं, अभी नहीं आया वो अच्छा अवसर। ऐसा करते—करते हम बहुत से अच्छे अवसरों को गवां देते हैं खुश होने के। हमें खुद भी नहीं पता होता कि आखिर हमें चाहिए क्या। क्या आपके साथ भी ऐसा होता है। आज ठान लिया हमने हम क्यों इंतजार करें खुश होने के लिए उस एक अवसर का। नहीं अब और इंतजार नहीं। हम अपने लिए अवसर को खुद बना लेंगें खुशगवार। बरसात का मौसम था, हमारा पसंदीदा मौसम। हम अपने बरामदे में बैठ गए। तभी बारिश की फुहारें तेजी से शुरू हो गईं। हम दोनों ही देखने लगे सामने लगी तारों पर नन्हीं—नन्हीं बूदों की लड़ियां। पत्तों से गिरती टप—टप बूंदें। आंखों में कुछ कौंध गया और वही बूंदें हमारी आंखो में समा गईं। अतीत की बहुत सी यादें जगा गईं। लेखनी ने मेरी ओर देखा कुछ उदासी से। मैंने अपने आंसू पोंछ लिए और लेखनी के भी। सिर हिलाया चल चलते हैं। इससे अच्छा अवसर और कोई नहीं खुश होने का। अपने बचपन की यादों में सराबोर होने का। लेखनी समझ गई उदासी एक क्षण में भाग गई। हमने कई रंगों वाला अपना रंगबिरंगा छाता लिया वही बचपन वाला। अरे आप हँस क्यों रहे हैं। आपके पास भी तो रहा होगा वैसा ही रंगबिरंगा वाला छाता। नहीं था तो अब ले आइये बाजार से। आजकल खूब मिल रहे हैं। हमें भी बेटी ने ही लाके दिया है बाजार से। अरे बचपन की यादें ताजा करने के लिए दो—चार सौ रू0 खर्च भी हो जायें तो कोई बात नहीं। यादों में डूबने और उतरने के बाद जो सुख मिलेगा उसका कोई मोल नहीं होगा। तो समझे आप सौदा महंगा नही है। "खुश्क था तो रास्ते में टिक—टिक छतरी टेक के चलते थे, बारिश में आकाश में छतरी टेक के टप—टप चलते हैं।" गुलजार की ये पंक्तियां बताती हैं छतरी की अहमियत। अब समझ आया छतरी की क्या अहमियत है। और यदि छतरी रंग—बिरंगी हो तो और भी अहमियत बढ़ जाती है, क्योंकि उस छतरी के अंदर—बाहर से बचपन जो झांकता है। अरे ये क्या आपकी आंखें भी नम हो गईं लगता है आपको भी बहुत कुछ याद आया है। बचपन वाला छाता या ऐसा ही कुछ। कोई बात नहीं आप भी चलिए हमारे साथ इस प्यारे से सफर पर। सभी साथ चलते हैं। आप छाता जरूर साथ ले लीजिए लेकिन। हाँ तो हम दोनों अपना रंग—बिरंगा छाता लेकर निकल पड़े। यूं ही कहीं भी जाने के लिए। हम यहां—वहां घूमते रहे, कभी पार्क तो कभी खाली सड़कों पर। बड़ा आनंद आ रहा था। बीच—बीच में हम छाते को बंद भी कर देते

ताकि बारिश की फुहारों में भीगने का आनंद ले सकें। कहीं–कहीं पानी के गड्ढों में कूद–कूदकर छपाक–छई करके चप्पल से पानी को उड़ाकर बचपन की शैतानियों के उस दौर को याद किया, जब स्कूल से आते–जाते हम ये सब करते थे। ऐसा करते–करते हमें उस काली माई की याद आ गई जो एक बार बारिश के मौसम में स्कूल से आते हुए हमारे पीछे अपने हाथ में पकड़े त्रिशूल को लेके दौड़ पड़ी थी और हम सड़क के किनारे लगे लैटर बॉक्स के पीछे छुप गए थे। असल में हम उसे "काली माई दिया सलाई भागो बच्चो आफत आई" कहकर चिढ़ा रहे थे। हम दोनों को ही हंसी आ गई। हमारा मन करने लगा अगर वो काली माई आज मिलती तो हम आज भी उसे चिढ़ाते और भाग जाते। तभी हमें पानी से भरा बड़ा सा गड्ढा दिख गया। हमने अपने पर्स से एक पेपर निकाला और उसकी नाव बनायी और उसे पानी भरे गड्ढे में तब तक तैराया जब तक की पेपर गल नहीं गया। फिर हम आगे बढ़े चलते–चलते हम बहुत दूर निकल गए। पता ही नहीं चला कब हम अपने स्कूल तक पहुंच गए। ऐसा लगा वहां पर रतन चाट वाला, भारत छोले वाला, मालन बेर वाली राम सिंह चीज वाला, कमल दिलबहार कुल्फी वाला हमारा इंतजार कर रहे हैं और सब हमें बुला रहे हैं। इन सब के आस–पास बहुत सी लड़कियां दिख रही थीं। पास गए तो कोई नही था वहां। लगा ये सब कहाँ खो गए और हम कहाँ आ गए आज बहुत दूर। एक–एक करके बहुत सारे बचपन के दोस्त, अपना स्कूल, बहुत सारी यादें याद आ गईं।

आपको याद है अपने घर का वो कोना जहां आप अपने दोस्तों के साथ गट्टा–पट्टी, चूरन खाते थे। उस चूरन का तीखा स्वाद जिसे हम अपनी जीभ की नोंक पर लगाते थे, जिसमें गट्टे लपेटकर खाते थे, जिसे अमरूद पर लगाकर चटखारे ले–लेकर खाते थे। उस चूरन के लिए अपने उस राम सिंह चीज वाले से कितनी लड़ाई करते थे कि तूने सफेद वाला चूरन ज्यादा डाल दिया है और काला कम डाला है। तूने दूसरे को ज्यादा दिया हमें कम, ऐसे लड़–झगड़कर हम कितना ही सारा चूरन या कोई भी चीज बढ़वा लेते थे वो भी खुशी–खुशी ऐसा करता था। कहाँ गई वो सब जिद वो लोग, वो चीजें। कहां गया वो लड़का जो सुबह–सुबह अपनी साइकिल पर एक स्टैंड बनाकर उसमें पीपनी, गुब्बारे, झुन–झुने, छोटी–छोटी कारें, साइकिल और ऐसे ही छोटे–मोटे खिलौने लेकर पौंपू/पीपनी बजाता हुआ गली–मुहल्लों में बेचने के लिए आता था, जिससे सुबह का एक अलग सा माहौल हो जाता था। कहां गया वो सड़क के किनारे पत्ते के दोने में चाट खाने का, पत्ते में पत्ते के ही चम्मच से काले–काले छोले खाने का, गट्टा–पट्टी और अमरूद को चूरन में लपेटकर खाने का आनंद कहां गया, वो पीपनी, डंडे में बांधे हुए गुब्बारे में पडे हुए राई के दानों को बजाने का सुकून। कहां गया वो अपनी गुड़िया का ब्याह कर उदास होना और अपने गुड्डे की दुल्हन को अपने घर लाने की खुशी मनाना। मेरी लेखनी और मैं एक–दूसरे का हाथ पकड़े हुए गीली आंखों से अपने गुजरे वक्त को अपने बचपन को याद करते रहे। फिर हम वापस आए। बारिश अभी भी भिगो रही थी और मन भी हमारे भीगे थे। पर अपने स्कूल में जाकर वो सब याद करना हमें सुकून दे गया।

आपको भी कुछ याद आया ? अपना स्कूल, स्कूल के साथी, अपने स्कूल के चीज वाले, चटकारे लेने वाले कुछ स्वाद, अपना वो रंगीन छाता, बारिश में छाता बंद कर भीगने का मजा। और हां मोबाइल उतना बुरा भी नहीं है जैसा हम शुरू में ही कह रहे थे, यदि इसका सही इस्तेमाल हो तो आज के जीवन में ये हमारा अभिन्न हिस्सा बन गया है। हम दोनों तो एकदम से तरोताजा हो गए हैं पुरानी यादों में डूब उतर के। उम्मीद है आपको भी इस सफर में मजा आया होगा। अच्छा अगले वर्ष आपसे फिर मिलेंगे कुछ पुरानी यादों और नए सपनों के साथ एक नए से पुराने सफर पर साथ जाने के लिए ।

उत्तराखंड में पहाड़ों के गांवों से पलायन : एक चिंता का विषय

डॉ. पंकज चौहान
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

देश का नवगठित राज्य उत्तराखंड (पूर्व मे उत्तरांचल) का गठन 2 नवम्बर 2000 मे कई वर्षों के आंदोलन के बाद हुआ, जिसका कि पहले नाम उत्तरांचल दिया गया लेकिन जनवरी, 2007 मे इसका नाम बदलकर उत्तराखण्ड कर दिया गया। 2011 की जनगणना के अनुसार इसका कुल क्षेत्रफल 51125 वर्ग किमी तथा इसकी कुल जनसंख्या 10,116,752 आँकी गई। उत्तराखंड राज्य की मांग इसलिए भी की गई थी कि यहाँ की अधिकतर जनसंख्या पहाड़ के गांवो मे निवास करती है, जिनका जीविका का मुख्य साधन खेती और पशुपालन करना है। पहाड़ी क्षेत्र एवं भूमि होने के कारण खेती मे इतनी पैदावार नही हो पाती कि यहाँ के लोगों की जीविका एवं आर्थिक स्थिति ठीक से चल सके या उनकी आने वाली पीढ़ी आगे बढ़ सके। इसके गठन का एक मुख्य कारण ये भी था कि यदि ये अलग राज्य बनता है तो इसके पहाड़ों के गावों की स्थिति सुधरेगी और पलायन जैसी मुख्य समस्या पर रोक लगेगी।

लेकिन उत्तराखंड गठन के 17 वर्षों के बाद भी पलायन जैसी समस्या जस के तस है, बल्कि कम होने के बजाय ये साल दर साल और गंभीर होती जा रही है। जिसके कि मुख्य कारण यहाँ की भौगोलिक स्थिति के साथ–साथ यहाँ के शिक्षा का स्तर, बेरोजगारी की समस्या, चिकित्सा सुविधाओं की कमी इत्यादि है लगभग 10–15 वर्षों में सरकार ने लगभग 15 हजार करोड़ रूपये खर्च किये लेकिन इसके बाबजूद भी परिणाम जस के तस है। इन वर्षों में लगभग 40 प्रतिशत लोग पलायन कर चुकें है जिसमें अलग–अलग जिलों के आंकडें चौकाने वाले है (सारणी –1 देखें)

सारणी –1 : जिलेवार खाली हुये घरों की संख्या।

जनपद का नाम	संख्या	जनपद का नाम	संख्या
अल्मोड़ा	36401	पौड़ी	35654
पिथोरागढ़	22936	चमोली	20625
टिहरी	33689	देहरादून	20625
हरिद्वार	18437	नैनीताल	15075
उत्तरकाशी	11710	चंपावत	11281
रुद्रप्रयाग	10971	बागेश्वर	10073
उधमसिंहनगर	11438		

इन आंकडों को देखा जायें तो इसमें सबसे ज्यादा खाली हुए घरों में अल्मोड़ा पहले स्थान पर, पौड़ी दूसरे स्थान तथा टिहरी तीसरे स्थान पर है जिसमे बागेश्वर जिले से सबसे कम पलायन हुआ है जिसके कारण लोग आज भी यहां की परिस्थितियों पर जीवन यापन करने के लिए मजबूर है।

पलायन विभाग की हाल की रिपोर्ट के कुछ आंकडें सामने आये है जिसको कि अमर उजाला ने भी प्रकाशित किया है। यह रिपोर्ट वर्ष 2017 तक के सर्वे को दर्शाता है कहने का तात्पर्य यह है की इन 17 वर्षों बाद भी स्थिति और चिंताजनक है। पलायन के इस प्रतिशत में 30 प्रतिशत इस राज्य के लोग प्रदेश से भी बाहर पलायन कर चुकें है तथा लगभग 70 प्रतिशत लोग राज्य के भीतर ही सुविधाजनक अथवा रोजगारपरक स्थानों पर जाने के लिए मजबूर हो गये, परिणाम स्वरूप उत्तराखण्ड से हर दिन लगभग 33 लोग पलायन कर रहे हैं जोकि एक बहुत गंभीर समस्या का विषय बन गया है।

सारणी –2 देखें तो इन गावों से अलग– अलग क्षेत्रों मे हुये पलायन की स्थिति को समझा जा सकता है, जिसमें जिलेवार अस्थाई एवं स्थायी पलायन की तस्वीर साफ दिखाई देती है। सारणी –3 यहां दर्शाती है कि वह कौन से कारण है जिससे युवा एवं अन्य लोग पलायन करने को मजबूर हैं, जिसमे मुख्य कारण युवाओं के लिए रोजगार के साधन न होना है जो कि अन्य कारणों का कुल 42% है ।

सारणी–2 : राज्य से अलग–अलग क्षेत्रों मे हुये पलायन की स्थिति प्रतिशत में।

क्षेत्र (जिनमे लोग पलायन कर गए)	पलायन प्रतिशत
नजदीकी कस्बे	19
राज्य के दूसरे जिलों मे	36
देश से बाहर	1
जिला मुख्यालय	15
देश के अन्य राज्यों मे	29

सारणी–3 : जिलेवार कुल अस्थाई एवं स्थायी पलायन की संख्या स्थिति।

जनपद का नाम	अस्थाई पलायन	स्थायी पलायन
अल्मोड़ा	53611	16207
पिथोरागढ़	31786	9883
टिहरी	71509	18830
हरिद्वार	8168	1251
उत्तरकाशी	19893	2227
रुद्रप्रयाग	22735	7835
पौड़ी	47488	25584
चमोली	32020	14289
देहरादून	25781	2802
नैनीताल	20951	4823
चंपावत	20332	7886
बागेश्वर	23388	5912
उधमसिंहनगर	6064	952

सरकार ने इस पर कुछ ठोस कदम भी उठाए हैं जैसे शिक्षा, चिकित्सा एवं अन्य विकास कि परियोजनाएँ आदि, लेकिन कहीं पर स्कूल हैं तो शिक्षक नहीं, और शिक्षक हैं तो बच्चे नहीं। कहीं अस्पताल हैं तो डाक्टरों की कमी है और कहीं डाक्टर हैं तो जीवन रक्षक सुविधाएं नहीं और जिन स्कूलों मे बच्चे ही नही है उन स्कूलों को बंद करना आज सरकार की मजबूरी हो गई है। उदाहरणतः एक मात्र कालसी ब्लॉक के ही लगभग 16 प्राइमरी स्कूल हाल ही में सरकार की इन्हीं कारणों से बंद करने पड़े हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि पहाड़ अब मैदानों की तरफ बहुत तेजी से पलायन कर रहा है और एक दिन ऐसा भी हो सकता है कि ये पहाड़ पूरी तरह खाली हो जाएँ। चिंता का विषय केवल प्रदेश या फिर यहाँ के लोगों के जीवन यापन का नहीं अपितु यह प्रदेश कई तरह की अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं से भी बंधा है जैसे नेपाल एवं चीन आदि, चीन जो कि हर रोज हमारे देश मे घुसपैठ करने की कोशिश करता रहता है और हमारी सीमा के अन्दर आने के बाद अपनी भूमि होने का दावा करता है, और आने वाले दिनों में जिसके परिणाम बहुत चिंताजनक हो सकते हैं जो की देश सुरक्षा के लिए भी खतरा बन सकते हैं, इसलिए यदि इस गंभीर समस्या को जल्दी नहीं रोका गया तो इसके दुष्परिणामों के हम खुद जिम्मेदार होंगे।

इसलिए इस गंभीर समस्या से निपटने के लिए सरकार को कुछ ठोस कदम उठाने की जरुरत है, जैसे शिक्षा, चिकित्सा जैसी सुविधाओं का विकेंद्रीकरण करना होगा, कृषि, बागवानी, पशुपालन एवं अन्य उत्पादन के क्षेत्रों में कार्य करना होगा जिससे कि रोजगार को भी बढ़ावा मिलेगा। राज्य के छोटे छोटे कस्बों को मसूरी, नैनीताल एवं चकराता जैसे पर्यटन स्थानों की तरह विकसित करने की भी जरुरत है जिससे कुछ हद तक इस समस्या से निपटा जा सके।

निशब्द

डॉ0 राजकुमारी चौहान
वी.श.के.च. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
डाकपत्थर, देहरादून

बात उन दिनों की है जब मेरा तबादला राजकीय डिग्री कॉलेज भिलोंग में हुआ। शहर की चकाचौंध से दूर, शान्त रास्ते दिल को सुकून दे रहे थे। छोटे–बड़े पत्थरों से टकराती सर्पाकार नदी कल–कल की ध्वनि से मानो कुछ गुनगुना रही हो। सीढ़ीदार खेतों पर खिली पीली सरसों ने इस खूबसूरत वातावरण में चार चाँद लगा दिये थे। मेरे रहने की व्यवस्था पहले ही महाविद्यालय द्वारा की जा चुकी थी। ज्वाइनिंग के साथ ही मुझे महाविद्यालय के तमाम प्रकार के प्रभार सौंप दिये गए। एन0एस0एस0 को छोड़कर मैंने अन्य सभी प्रभारों को सहजता के साथ स्वीकार कर लिया।

मेरा कमरा डिग्री कॉलेज से थोड़ी ही दूरी पर था। चॉय की चुस्कियों के साथ मैं पहाड़ की हल्की बारिश का आनन्द ले रही थी। लेकिन हवा का झोंका उस बारिश को उड़ाये ले जा रहा था, और इस लुक्का–छुप्पी में मुझे बहुत आनन्द आ रहा था। तभी एफ0एम0 की आवाज मेरे कानो में गूंजी "भाइयों और बहनो अगर सवा सौ करोड़ की जनता ये तय कर ले कि न हम गन्दगी करेंगे और न गन्दगी करने देंगे" । ये प्रधानमंत्री के स्वच्छता पर उद्बोधन थे। सारा उद्बोधन सुनने के बाद न जाने क्यों मैने अपना मोबाइल उठाया और प्राचार्या जी को एन0एस0एस0 का प्रभार स्वीकारने की हामी भर दी। सम्भवतः जो प्रभाव मुझे अब तक बोझ लग रहा था, वह अब जिम्मेदारी में तब्दील हो चुका था।

दूसरे दिन डॉ0 शैलजा से एन0एस0एस0 का प्रभार लेने के उपरान्त मैं अपने विभाग में बैठकर अपने कुछ बचे हुए कार्यों को निपटा ही रही थी कि तभी दुबली–पतली छरछरे देह वाली लड़की मेरे करीब आई।

मैने उसकी ओर देखते हुए कहा "कहो क्या काम है?"

उसने धीरे स्वर में कहा "मेरा नाम पूजा है ", और खिड़की की ओर इशारा करते हुए कहा कि "वो जो पहाड़ी पर गांव दिखाई दे रहा है वह मेरा गांव है, सिरौल गांव।"

मैने पीछे मुड़कर खिड़की से झांक कर देखते हुए कहा– "बहुत सुंदर गांव है।"

तभी पूजा बिना समय गवांए ही बोल पड़ी "क्या आप इस वर्ष एन0एस0एस0 का 07 (सात) दिवसीय शिविर मेरे गांव में लगायेंगी ?"

मैने उसे टालने के लिए "देखते हैं" कहकर जाने के लिए कहा।

तभी डॉ0 विनय 07 दिवसीय शिविर की चर्चा वार्ता के लिए मेरे विभाग में आ गये। बहुत विचार विमर्श के बाद सिरौल गांव का ही चयन हुआ। सम्भवतः पूजा के आमन्त्रण का असर था।

लगभग एक सप्ताह बीतने के बाद 50 छात्र–छात्राओं के साथ, मैं सिरौंल गांव पहुँची। गांव के मुख्य रास्ते में लम्बी–लम्बी झाड़ियाँ, जो मेरे कद से कई ऊंची थी। रास्ते में हर तरफ बिखरी गन्दगी। कुछ समझने का प्रयास कर ही रही थी कि सामने मोड़ पर मिट्टी का ढ़ेर देखकर अपने चुनाव पर पछतावा होने लगा, खैर जब ओखली में सर डाल ही दिया तो मूसल से क्या डरना,ये सोचकर आगे बढ़ गई।

शिविर का पहला दिन गांव के रास्ते की झाड़ियॉ काटने में ही बीत गया। सभी स्वयं सेवी जहाँ शिविर लगा था वापिस आ गये। तभी मेरी नजर मोड़ पर गई, जहां पूजा पहाड़ खोद रही थी । मैने उसे बहुत डाँटते हुए रात्रि के भोजन की सम्पूर्ण जिम्मेदारी सौंप दी।

दिनभर की थकान के बाद रात कब गुजरी पता ही नही चला । दूसरे दिन प्रार्थना और योगासन के साथ शिविर का आरम्भ हुआ। नाश्ते के बाद प्रातः 8:00 से दोपहर 12:00 बजे तक गांव में श्रमदान करना था। तभी गांव की कुछ औरतें सामने खड़ी दिखी, उनके मुरझाए और सुस्त चेहरे उनके आलसीपन को दर्शा रहे थे। न

जाने क्यों मुझे अपने चुनाव के साथ ही पूजा पर भी गुस्सा आ रहा था। वो शायद इसलिए कि मेरी आज्ञा के बिना पूजा का बार–बार उस मोड़ पर जाकर मिट्टी खोदना मुझे स्वीकार न था। पूजा का बार–बार मोड़ पर जाकर मिट्टी खोदना मेरे क्रोध को और अधिक बढ़ाने लगा, दिन भर की थकान पूजा पर उतार कर शांत होती।

मै रात्रि भोजन के उपरान्त अगले दिन की दिनचर्या की तैयारी कर ही रही थी कि तभी पूजा मेरे करीब आई और धीमे स्वर में बोली "मैम आपको मेरा गांव कैसा लगा?"

मैने चिड़चिडे अंदाज में कहा "बहुत गंदा" पूजा चुपचाप चल दी।

अगले दिन सभी गांव की औरते फावड़ा और दरांती लिये एन0एस0एस0 शिविर में पहुंच गई और मेरे स्वयं सेवियों के साथ गांव के स्वच्छता अभियान में जुट गई। मुझे हैरानी हुई परन्तु अफसोस हुआ कि उस गांव का पुरूष वर्ग इस अभियान में शामिल होने नही आया। उस गांव की हालत देखकर मुझे उन सुस्त महिलाओं से ज्यादा वहां के पुरूषों पर गुस्सा आ रहा था। परन्तु गुस्से का घूंट पीने के अलावा मेरे पास कोई और चारा नही था। गांव की महिलाओं के आने से स्वच्छता अभियान शीघ्र ही समाप्त हो गया। मैने सभी स्वयं सेवियों को थोड़ा आराम करने के लिए कह दिया। मै रसोई घर मे दोपहर के खाने की तैयारी देख ही रही थी कि अचानक मेरी नजर खिड़की पर गई तो देखा कि सभी स्वयं सेविकायें, छात्र–छात्रांए गांव की सभी महिलांए एंव पूजा, मोड़ पर पहाड़ की मिट्टी खोद रही है।

ना जाने क्यों पूजा के प्रति मेरी नफरत बढ़ती ही जा रही थी। मै नही जानती थी कि मैं ऐसा व्यवहार क्यों कर रही हूँ। मेरा ऐसा व्यवहार अनचाहे काम को हाथ में लेने के कारण था या उस गांव में फैली उदासी के कारण या पूजा को अपने आस–पास देखकर, जिसके कारण मुझे उस गांव में आना पड़ा। तत्कालीन परिस्थितियां मुझे इस बात का जवाब न दे सकी। छठवें दिन की सांय चर्चावार्ता में मैनें "सिरौल गांव पर अपने विचार" विषय पर सामान्य चर्चा रखी। सभी ने अपने विचार उस गांव के प्रति सकारात्मक दिये। सम्भवतः सभी उस गांव की परिस्थिति से परिचित थे। मैं अचम्भित थी छात्रों की ऐसी प्रतिक्रिया देखकर। अन्त में पूजा को बोलना था, छात्रों की प्रतिक्रिया देखकर मुझे लगा कि पूजा तो इसी गांव की है भला वो इन छात्रों से अलग क्या बोलेगी।

मैने उसे बैठने का इशारा किया और झल्लाते हुए कहा कि "मैने अपनी जिन्दगी में इतना गन्दा गांव कभी नहीं देखा और न ही ऐसे लोग जो मुर्दो से बद्तर है।

तभी पूजा धीरे से खड़ी हुई और मेरे करीब आकर जैसे ही उसने मेरे हाथों को छूआ मै भीतर तक कांप उठी। उसके हाथ पत्थर से भी कठोर थे। जगह–जगह हथेली पर पड़ी खून से भरी दरारें किसी को भी निशब्द बना दे।

मै कुछ बोल पाती कि पूजा बीच मे ही बोल पड़ी "मेरा गांव बहुत सुन्दर था मैम" और यहां रहने वाले लोग बहुत सभ्य। आज का ही तो वो मनहूस दिन था, जब इस गांव से सारी खुशियां चली गई।"

मोड़ की ओर इशारा करते हुए, वह उदास स्वर में बोली, "यही वो मोड़ था जब बारातियों से भरी बस नीचे खाई में जा गिरी थी। यही वो दो मनहूस कारवें है जिनके सामने मेरे भाई सहित 55 जिन्दगियां खत्म हो गई थी। यही वे दो हाथ थे जो मुर्दा जिस्म को जीवन की आस मे टटोल रहे थे। मै बहुत चीखी ! मै बहुत चिल्लाई, मगर भगवान ने मेरी मदद नही की। मगर आप इस गांव में भगवान बनकर आये। इस गांव में कोई मर्द नही बचा है जो इस गांव को सम्भालता। "

धन्यवाद आपका जो आपने एन0एस0एस0 शिविर के लिए इस गांव क चयन किया। आज यह मोड़ इतना चौड़ा हो गया है कि अब कोई बस खाई में नही गिरेगी। मैं नही जानती कि पूजा और मैं निशब्द कितनी देर तक उस मोड़ को देखते रहे । पर हाँ इतना अवश्य जानती हूँ कि वो निशब्द बहुत कुछ बयां कर गये, बहुत कुछ सिखा गये। आज मुझे गर्व होता है कि मैं एन0एस0एस0 प्रोग्राम का हिस्सा रही।

भारत में वर्तमान परिपेक्ष्य में पेट्रोल की कीमत वृद्धि की प्रासंगिकता

डा0 नीलू कुमारी
वी.श.के.च. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
डाकपत्थर, देहरादून

अर्थशास्त्र सीमित साधनों के समुचित उपयोग का अध्ययन करता है और सीमितता एक विश्वव्यापी समस्या है। इसी सीमितता की कड़ी में अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण समझा जानेवाला एक साधन पेट्रोल भी है, जिसकी मांग भारत में निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। मांग एवं पूर्ति के इस असंतुलन का परिणाम पेट्रोल की आसमान छूती कीमत के रूप में सामने आ रहा है। यद्यपि यह विश्व के अधिकांश देशों की समस्या है परन्तु अर्धविकसित एवं विकासशील देशों में यह समस्या साधनों के अभाव के कारण और खराब है। भारत जैसे विकासशील देशों में जहाँ गरीबी, बेरोजगारी, जनसंख्या वृद्धि, मूल्यवृद्धि इत्यादि जैसी समस्याएं विद्यमान है, पेट्रोल की कीमत में वृद्धि होना आग में घी डालने के समान हो जाता है। जो देशव्यापी बंद, राजनीतिक विरोध एवं हंगामे के रूप में सामने आता है।

अतः पेट्रोल की महत्ता एवं मांग में वृद्धि तथा इसकी सीमित उपलब्धि को देखते हुए भारत में पेट्रोल की कीमत वृद्धि के कारण, अर्थव्यवस्था पर उसके प्रभाव, इससे निबटने के उपाय इत्यादि विभिन्न पहलूओं को समझना आवश्यक है ताकि इसका समुचित समाधान निकाला जा सके।

पेट्रोलियम पदार्थों के अन्तर्गत मुख्य रूप से पेट्रोल, डीजल, किरोसन, एल0पी0जी0 एवं प्राकृतिक गैस को सम्मिलित किया जाता है। इनमें हर साधन की अपनी–अपनी महत्ता है और अन्य साधनों की तरह ही पेट्रोल भी एक महत्वपूर्ण शक्ति का साधन है। इसके महत्व को देखते हुए इसे तरल स्वर्ण कहा जाता है। इसका उपयोग ऐसे तो कई रूपों में होता है परन्तु मुख्य रूप से इसका उपयोग यातायात एवं परिवहन के रूप में होता है। भारत में पेट्रोल का प्रतिदिन उपभोग लगभग 58 करोड़ लीटर है। इतना महत्वपूर्ण साधन होते हुए भी भारत की आवश्यकता का केवल 25 प्रतिशत पेट्रोल ही देश में उत्पादन होता है। आवश्यकता का शेष 75 प्रतिशत पेटोलियम निर्यातक देशों के संगठन (ओपेक) से आयात किया जाता है। जो कम्पनियां देश में पेट्रोल एवं अन्य पेट्रोलियम पदार्थों का उत्पादन एवं विपणन करती हैं उनमें प्रमुख हैं : इण्डियन ऑयल कॉरपोरेशन, भारत पैट्रोलियम कॉरपोरेशन लिमिटेड, हिन्दुस्तान पैट्रोलियम, कॉरपोरेशन लिमिटेड, चेन्नई पैट्रोलियम कॉरपोरेशन लिमिटेड व मंगलौर रिफाइनरी और पैट्रोलियम लिमिटेड ।

भारत में पेट्रोल की कीमत वृद्धि के कारण

भारत में पेट्रोल की कीमत किन–किन परिस्थितियों में बढ़ती है उसे देखने से पहले हम यह देखें कि पेट्रोल की कीमत वृद्धि में किन–किन चीजों का समावेश रहता है। नीचे वृत्त चार्ट में दिल्ली में फरवरी 2018 में पेट्रोल की कीमत दिखाई गई है।

विभिन्न राज्यों में वैट और बिक्रीकर की

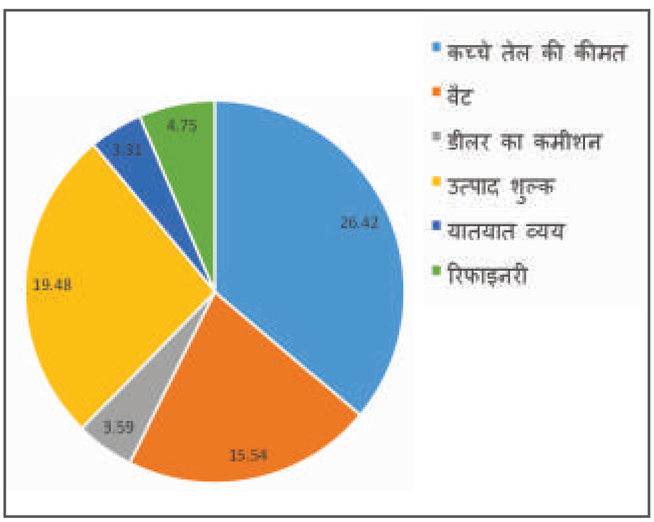

चित्र–1 : फरवरी 2018 में जब पेट्रोल की कीमत रुपये 73.09 थी

अलग–अलग दरों के कारण पेट्रोल के मूल्य में भी अन्तर हो जाता है।

भारत में पेट्रोल की कीमत निम्न परिस्थितियों में बढ़ती है :–

- जब विदेशों से कच्चे तेल का आयात ऊँची कीमतों पर होता है तो देश में भी उसकी कीमत बढ़ानी पडती है।
- यदि देश की सरकार पेट्रोल पर सब्सिडी समाप्त या कम कर देती है। जैसा कि वर्तमान परिस्थितियों में सरकार ने पेट्रोल पर सब्सिडी समाप्त कर उसे नियंत्रण मुक्त कर दिया है।
- जब सरकार अपने टैक्स की दर (केन्द्र सरकार उत्पादन शुल्क एवं आयात कर के रूप में एवं राज्य सरकार बिक्री कर या वैट के रूप में) बढ़ा देती है।
- जब तेल कम्पनियां अपना मुनाफा बढ़ाती है।
- देश के रूपये की विनिमय दर कम हो जाने पर भी आयातित पेट्रोल की कीमत बढ़ जाती है। जैसा कि अभी हाल में रूपये की विनिमय दर गिरने के कारण भी पेट्रोल की कीमत में वृद्धि हुई है।
- जब मांग की तुलना में पेट्रोल का उत्पादन काफी कम हो।

कीमत वृद्धि का अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

उपरोक्त कारणों में किसी एक के कारण या उनके सम्मिलित प्रभाव के कारण जब पेट्रोल की कीमत बढ़ती है तो भारतीय अर्थव्यवस्था पर उसका प्रभाव निम्न रूपों में दिखता है:–

- पेट्रोल की कीमत में वृद्धि से यातायात एवं परिवहन व्यवस्था महंगी हो जाती है जिसका प्रभाव व्यक्तिगत व्यय पर पड़ता है। क्योंकि महंगे परिवहन के कारण व्यक्ति को अपने अन्य आवश्यक व्यय में कटौती करनी पड़ती है।
- पेट्रोल से चलने वाली गाड़ियों की मांग में कमी के कारण उसकी बिक्री में कमी आती है जिसका प्रभाव ऑटोमोबाइल एवं कार उत्पादक कम्पनियों के उत्पादन पर पड़ता है।
- भारत में डीजल की तुलना में पेट्रोल की कीमत अधिक बढ़ने से इंधन के रूप में डीजल की मांग अधिक हो जाती है। इसका प्रभाव पर्यावरण पर तो पड़ता ही है मूल्य में भी वृद्धि होती है।

कीमत को नियंत्रित करने के उपाय एवं उन उपायों की सीमाएं

पेट्रोल की कीमत को कम करने के लिए निम्न उपायों को अपनाना होगा परन्तु इनमें से कुछ उपायों की अपनी सीमाएं भी है–

- कीमत कम करने का एक उपाय है कि सरकार पेट्रोल पर सब्सिडी दे तब इसकी कीमत कम हो सकती है। परन्तु सरकारी व्यय एवं राजकोषीय स्थिति को देखते हुए पेट्रोल की कीमत को सरकारी नियंत्रण से मुक्त करने का निर्णय 2010–11 के बजट सत्र के बाद दिया गया था। अब इसकी कीमत तेल कम्पनियां आवश्यकतानुसार तय करती है।

  यदि देखा जाय तो सब्सिडी समाप्त करना सही भी है क्योंकि सरकार जब सब्सिडी देती है तो राजकोषीय घाटे में वृद्धि होती है और सरकार को अपने अन्य महत्वपूर्ण व्यय में कटौती करनी पड़ती है। इसका देश की अर्थव्यवस्था पर बुरे प्रभाव पड़ते है। यदि सरकार इस सब्सिडी की रकम का इस्तेमाल गरीबों के कल्याण के लिए करे, जैसे – गरीबों के लिए आवास, मुफ्त भोजन, स्कूलों में मीड डे मील, मनरेगा या अन्य कोई रोजगार योजनाओं पर तो यह देश एवं समाज के हित में होगा। क्योंकि इससे गरीबों की क्रय शक्ति बढ़ेगी और आय एवं धन के वितरण की विषमता भी कम होगी।
- दूसरा उपाय है कि भारत की तेल कम्पनियां अपना मुनाफा कम करे। परन्तु कोई भी कम्पनी चाहे वह सरकारी हो या निजी अधिक दिनों तक न तो घाटे में चल सकती है और न बिना मुनाफे के काम कर सकती है। जबकि भारत की तेल कम्पनियां इस क्षेत्र में काफी दिनों तक घाटा उठाती रही है तथा अभी भी अन्य पेट्रोलियम पदार्थों पर उठा ही रही है। जब पेट्रोल की कीमत में अब तक की सबसे बड़ी बढ़ोतरी 24 मई 2012 को 7.50 रूपये हुई थी उससे पहले तक पेट्रोल कम्पनियों की दलील थी

कि उन्हें पेट्रोल पर प्रति लीटर 8 रूपये का नुकसान उठाना पड़ रहा है।

- एक तरीका पेट्रोल की कीमत कम करने का यह भी है कि सरकार पेट्रोल पर से कर (उत्पादन कर और ब्रिकीकर) कम या समाप्त करे या फिर अन्य कर के रूप में परिवर्तित कर दे। ऐसे तो सरकार कर के रूप में जो आय प्राप्त करती है उसका इस्तेमाल भी देश के विकास के लिए ही करती है। परन्तु यह संभव है कि सरकार इस कर को अन्य कर के रूप में परिवर्तित कर दे। जैसा कि पूर्व में गोवा सरकार ने पेट्रोल की कीमत बढ़ने पर किया। जब पेट्रोल की कीमत 7.50 रूपये बढ़कर 75 रूपये प्रति लीटर हो गई तो गोवा में पेट्रोल केवल 61 रूपये थी। क्योंकि गोवा सरकार ने राज्य कर को शून्य कर दिया और इस टैक्स को दूसरे टैक्स एवं फीस के रूप में परिवर्तित कर दिया। वहाँ टोल टैक्स बढ़ा दी गई, शराब, ब्यूटी पार्लर एवं एटोर्नी पावर पर टैक्स बढ़ा दिये गये।

यदि गौर किया जाए तो उपरोक्त जो भी टैक्स परिवर्तित हुए उनका इस्तेमाल अधिक आय वाले व्यक्तियों द्वारा ही किया जाता है। अतः न तो उन्हें इस टैक्स परिवर्तन से खास लाभ हुआ न हानि। परन्तु इतना जरूर है कि राज्य के लोगों को देश के अन्य राज्यों को देखते हुए तत्काल पेट्रोल सस्ता लगा होगा। अतः यदि हम चाहते हैं कि सरकार पेट्रोल पर टैक्स में कमी करे और इसकी जगह अन्य चीजे मंहगी हो तो गोवा का अनुसरण करना होगा। किन्तु वैसे राज्य जो इंधन से होने वाली आय पर ज्यादा निर्भर है वे ऐसा नहीं कर पायेंगे।

दूसरी ओर राज्य कर (वैट), कर का केवल एक भाग है। इससे बड़ा भाग केन्द्रीय उत्पादन शुल्क है तो वर्तमान में 14.78 रूपये है। यदि राज्य एवं केन्द्र सरकार एक साथ इसमें कटौती करे तो पेट्रोल के उपभोग करने वालों को थोड़ी राहत मिल सकती है।

- एक अन्य उपाय पेट्रोल के उत्पादन को बढ़ाकर उसकी कीमत में कमी लाने का है। परन्तु जैसा कि हम जानते है कि पेट्रोल एक प्राकृतिक संसाधन है जिसकी पूर्ति सीमित है। समय समय पर भू–वैज्ञानिक, तेल खनन करने वाले और पर्यावरण विज्ञानी यह चेतावनी देते रहे है कि समुद्र के अन्दर से तेल निकालने की अधिकतम सीमा तक हम पहुंचने वाले है। सच्चाई जो भी है, परन्तु इतना तो तय है कि चाहे वह भारत हो या विश्व के अन्य देश पेट्रोल की बढ़ती आवश्यकता के अनुसार इसके उत्पादन को असीमित क्षमता तक नहीं बढ़ा सकते है।

- पेट्रोल की बढ़ती आवश्यकता एवं इसकी सीमित उपलब्धता को देखते हुए इसके विकल्प की तलाश करना भी आवश्यक है। ऑटोमोबाइल कम्पनियां सी.एन.जी. को ईधन के बेहतर विकल्प के रूप में देख रही है परन्तु सी.एन.जी. की उपलब्धता सीमित शहरों तक होने के चलते कम्पनियां इस क्षेत्र में बड़ा निवेश करने से फिलहाल कतरा रही है। देश में लगभग पांच हजार सी.एन.जी. गाडिया ऑटोमोबाइल कम्पनियां की ओर से सालभर में बेची जाती है। यह कुल बिक्री का लगभग 2 प्रतिशत है।

- एक अन्य काफी महत्वपूर्ण उपाय पेट्रोल की मांग में कमी लाना या पेट्रोल के उपभोग में कमी लाकर उसके मूल्य को कम करना है। पेट्रोल के उपभोग में कमी के कारण जहां देश में पेट्रोल की कीमत कम होगी वहीं विदेशों से आयात कम होने पर रूपये की विनिमय दर में भी सुधार होगा। पेट्रोल के उपभोग में कमी यदि निम्न प्रकार से लाई जाये तो यह व्यक्ति एवं समाज दोनों के लिए कई प्रकार से लाभदायक सिद्व हो सकता है:

(i) जरूरत पड़ने पर सार्वजनिक परिवहन का इस्तेमाल ज्यादा से ज्यादा किया जाना चाहिए। इससे पेट्रोल के खपत में काफी कमी आएगी।

(ii) लोग थोड़ी दूरी तय करने लिए गाड़ी का इस्तेमाल नहीं करके पैदल चले। इससे एक ओर जहां पेट्रोल की बचत होगी वहीं दूसरी ओर लोगों के स्वास्थ्य में भी सुधार होगा। आजकल पैदल चलने की आदत लोगों की समाप्त होती जा रही है। इसका परिणाम मोटापा, शुगर, ब्लडप्रेशर आदि रोगों के रूप में दिखता है। अतः आवश्यक है कि जहां ज्यादा जरूरत न हो, गाड़ी नहीं चलाये।

(iii) गाड़ी की जगह कम दूरी के लिए साईकिल का इस्तेमाल किया जा सकता है, जो सड़कों पर विलुप्त होती जा रही है। इससे जहां स्वास्थ्य में सुधार होगा, पेट्रोल की बचत होगी, पर्यावरण प्रदूषण में कमी आएगीं वहीं सड़क पर दुर्घटनाओं में भी कमी आएगी। ऐसा तब संभव है जब लोग इसे प्रतिष्ठा से नहीं जोड़ें, क्योंकि आजकल लोग गाड़ी को अपनी प्रतिष्ठा की चीज समझते है और गाड़ी खड़ी करने की जगह भले न हो लेकिन गाड़ी खरीदने की होड़ में लगे रहते है।

कई लोग गाड़ी की बढ़ती संख्या को देश के विकास का सूचक मानते है। परन्तु सवाल यह है कि इन गाड़ियों को चलने के लिए सड़के भी विकसित होनी चाहिए। अन्यथा खराब सड़कों की वजह से पेट्रोल की बर्बादी तो होगी ही साथ ही दुर्घटनाओं के आंकडे भी बढ़ते ही जायेंगे।

अतः उपरोक्त उपायों पर अमल करके पेट्रोल की मांग एवं उसकी कीमत में काफी हद तक कमी लायी जा सकती है। अन्यथा सरकार या तेल कम्पनियां यदि पेट्रोल की कीमत आवश्यकतानुसार बढ़ाती है तो उसे हमें स्वीकार करना चाहिये। ऐसे भी पेट्रोल की मांग ज्यादातर वैसे ही लोग करते हैं जो इसकी कीमत के भार को वहन कर सकते हैं। अतः देश, सरकार, समाज एवं व्यक्ति विशेष के हित में पेट्रोल की कीमत वृद्धि को बेवजह आन्दोलन का मुद्दा एवं राजनीतिक मुद्दा नहीं बनाया जाना चाहिए।

मौखिक इतिहास स्रोत एवं लेखन

डॉ. राकेश मोहन नौटियाल
वी.श.के.च. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
डाकपत्थर, देहरादून

भूत में घटित घटनाओं को लिपिबद्ध या दोहराया जाता है। मेरा कहने का अर्थ है केवल लिखित इतिहास के आधार पर एक विशुद्ध इतिहास लिखना कठिन है। इसलिए इतिहासकार तथा शोधार्थी इतिहास को एक अलग स्वरूप प्रदान करने के लिए खोज करते रहते हैं। इसमें हमेशा नया जुडता रहता है। बहुत लम्बे समय तक इतिहास लेखन में ऐतिहासिक रूप से पुरातात्विक सामग्री तथा लिखित प्रमाणों पर ही लिखा जाता रहा है। परन्तु वर्तमान में मौखिक इतिहास लेखन नें इतिहासकारों तथा शोधार्थियों को एक नया क्षैत्र प्रदान किया है। मौखिक इतिहास लेखन में मौखिक स्रोतों की आवश्यकता होती है। वर्तमान में विश्व के अनेक अभिलेखागारों में मौखिक स्रौतों को इकट्ठा किया जाता है।

लोक अभिलेख अधिनियम जो कीनिया के राष्ट्रीय अभिलेखागार को संचालित करता है में रिकार्ड की परिभाषा में केवल लिखित अभिलेखों को ही सम्मिलित नहीं किया गया है अपितु ऐसे समस्त साधनों को भी सम्मिलित किया गया है, जिससे हमें सूचना प्राप्त होती है। यह परिभाषा सूक्ष्म रूप में मौखिक स्रोतों का आलिंगन करता है। सामान्यतः अभिलेखागार रोजमर्रा के कार्यों के द्वारा बनी मिसिलों अर्थात् फाईलों का संग्रह मात्र होता है। परन्तु वर्तमान में अलिखित स्रौतों के सग्रंह को भी अभिलेखागारों में सम्मिलित किया गया है। यह केवल इतिहास का सग्रंहमात्र नहीं होता है अपितु हमारी विरासत का संग्रह भी है जो हमारे भूत, भविष्य तथा वर्तमान के दर्शन भी कराता है। सम्पूर्ण विश्व में मौखिक इतिहास उतना ही प्राचीन है, जितनी यहां की सभ्यतायें। जब मानव लेखनकला से परिचित नहीं था उस समय वह केवल कहे गये शब्दों को याद करके रखता था। यह तकनीक उतनी ही प्राचीन है जितनी भाषा। हमारे पूवर्ज बिना लिखे ही गुफा चित्रकला की सहायता से अपनी बात एक दूसरे तक तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाते थे। भारतीय इतिहास तो श्रुत लेखन परम्परा से भरा हुआ है। श्रुत अर्थात् सूने हुये को लिखकर, स्मृति के आधार पर लिखने की परम्परा को कहा जाता है। चीन में 1122–221 ई0 पू0 जुहू राजवंश के समय पर इतिहास लेखक इतिहास लिखने के लिए प्रजा के मध्य जाते थे तथा वहाँ से जानकारियों का संग्रह करते थे। प्राचीन ग्रीस में हेरोडोटस ने भी इतिहास लेखन के लिए आंखों देखी बातों को तत्कालीन इतिहास में प्रयुक्त करने की बात कही है।

भारत में शिष्य गुरूकूलों में रहकर श्रुती अध्ययन् अर्थात् सुनकर उनको स्मरण करके अर्थात् स्मृति के माध्यम से अध्ययन करतें थे। भारत का सम्पूर्ण प्राचीन साहित्य इसी प्रकार से लिखा गया है। वेद पुराण या कोई अन्य ग्रन्थ इसी आधार पर लिखे गये है। यद्यपि प्राचीनकाल से ही भारत में मौखिक इतिहास लेखन के लिए मौखिक स्रौतों का प्रयोग किया जाता रहा है। यद्यपि वर्तमान में इतिहासकार या इतिहास के छात्र मौखिक स्रोतों का प्रयोग कम ही करते हैं। परन्तु यह सत्य है कि मौखिक स्रोत इतिहास की उन कड़ियों को जोडतें हैं जो छूट गये हैं अर्थात् यह रिक्त स्थान को भरता है जिनको लिखित स्रोतों से नही भरा जा सकता है। वर्तमान में इतिहासकार आधुनिक इतिहास लेखन हेतू लोक अभिलेखों का प्रयोग अधिक करते है। परन्तु लोक अभिलेख सामान्यतः सरकार का पक्ष रखतें है, जो कभी–कभी सामान्यजन के बारे में कुछ नहीं कहते हैं या कहते हैं भी तो बहुत कम। इसके साथ ही साथ इसमें पक्षपात का भय भी होता है। अतः यह माना जा सकता है कि इतिहास लेखन में पक्षपातपूर्ण लेखों का प्रयोग इतिहास के स्वरूप को बिगाड सकता है। ऐसा भी सामान्यताः होता है, कि पाण्डूलिपियां या अभिलेख सम्पूर्ण दस्तावेज का संग्रह नहीं होता है क्योंकि सामान्यतः रिकार्ड रखने वाली ऐजेन्सी के अधिकारी कुछ अभिलेखों को अति गोपनीय होने के कारण या अपनी बदनामी से बचनें के लिए अभिलेखागारों को नही सौपतें हैं। अतः हमें सम्पूर्ण दस्तावेज प्राप्त नही हो पाता है। इतिहास लेखन का दूसरा प्रमुख स्रोत समाचारपत्र

है। परन्तु यह भी यर्थात् चित्रण प्रस्तुत नहीं करता है। क्योकि इस पर भी विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। तीसरा महत्वपूर्ण स्रोत जानी मानी हस्तियों के व्यक्तिगत पत्र भी होतें हैं। परन्तु यह भी विचारधारा से प्रभावित होतें हैं। क्योंकि एक ही मुददे पर दो अलग–अलग व्यक्तियों के विचार विभिन्न होते हैं। ये सभी स्रोत मूलतः इतिहास के एक ही पहलु को दिखाते है। इन सभी स्रोतों से प्राप्त इतिहास की भ्रान्तियों को दूर करने के लिये हमें ऐसे स्रोत की आवश्यकता होती है। जो इनको सम्पूर्ण रूप से दिखा सके। इस रूप में मौखिक स्रोतों को स्वीकार किया जा सकता है। इससे न केवल भूत अपितू समकालीन इतिहास को समझनें में भी सहायता प्राप्त होती है। इसके माध्यम से हम सत्य को पुनः जाँच सकते है।

जेम्स इ फौग्रेटी ने कहा है कि "Oral History does indeed offers landed views of events and people but so do paper records. The later are as susceptible to manipulation as any medium, and even if quite candid, may undergo the prenonation selection that is the nightmare of an archivist." इन्होने आगे कहा है कि मौखिक इतिहास उन सभी सूचनाओं को पूर्ण करता है जो कि कागजों में संग्रहित नहीं हो सकती है। इस प्रकार माना जा सकता है कि लोक अभिलख विषय के बाहय स्वरूप को दर्शाते है, जबकी व्यक्तिगत पत्र तथा मौखिक अभिलेख, साक्षात्कार आदि इसको व्यक्तिगत ज्ञान, सुझाव तथा व्याख्या आदि के रूप में माँस प्रदान करते है। एम. एम काचरु के अनुसार मौखिक इतिहास का मुख्य उद्देश्य अप्रकाशित स्रोत साधनों को पूरकत्व प्रदान करना है। सामान्यतः मौखिक विचार तथा विचारधारा को दो स्वरूपों में जाना समझा जाता है पहला मौखिक इतिहास तथा मौखिक परम्परा। मौखिक इतिहास को मौखिक परम्परायें इतिहास को पूर्णरूप से समझानें में सहायता करती हैं। इनमे से मौखिक इतिहास, इतिहासकारों से सम्बन्धित माना जाता है जो मुख्यतया जीवनी लेखन पर ध्यान देतें हैं।

मौखिक इतिहास तथा मौखिक परम्पराओं के इतिहासवष्त में प्रयोग करने के मध्य अन्तर करना बहुत ही कठिन है। इस बात पर विचार मलेशिया के पनाग में हुई SARBICA के सम्मेलन में किया गया जिसमें स्वीकार किया गया कि मौखिक इतिहास वह क्षेत्र है जो सामान्यतः इतिहासकारों द्वारा प्रयोग किया जाता है। इसी सेमिनार में इतिहास लेखक तथा अभिलेखपाल के मध्य क्या भिन्नता है पर भी विचार किया गया तथा पाया गया कि इतिहास लेखक, मौखिक स्रोतों का प्रयोग सामान्यतः अपने लाभ हेतू करता है, जबकि अभिलेखपाल मौखिक स्रौतों की खोज सभी के लिए समानता में करता है। मौखिक इतिहास तथा परम्पराओं में स्रोतों को पुनः चुनने तथा एकत्रित करने की कार्यविधि समान है। परन्तु यह साक्षात्कार तकनीक में भिन्न है। मौखिक इतिहास सामान्यतः पढे लिखें लोगों से सम्बन्धित है जबकि मौखिक परम्परायें पढे लिखे तथा अनपढ़ दोनों ही प्रकार के लोगों से समानता रखता है। डॉ. राम किशन चट्टोपाध्याय नें मौखिक इतिहास को सामाजिक इतिहास तथा आन्दोलनों के इतिहास के लेखन में स्वीकार किया है। इन दोनों प्रकार के इतिहास लेखन में मौखिक स्रोत सबसे अधिक सहायक होते है। इसके साथ ही साथ क्षेत्रीय इतिहास लेखन में मौखिक स्रोतों को मजबूत हथियार के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। केवल सामाजिक क्षेत्रीय या आन्दोलनों के इतिहास लेखन में ही मौखिक स्रौतों का प्रयोग नहीं किया जा सकता है अपितु किसी युद्ध के इतिहास लेखन में उस युद्ध में सम्मिलित किसी योद्धा के संस्मरण या फिर सिग्नल मुख्यालय को मिले सूचना सन्देश भी मौखिक इतिहास लेखन में सहायक होते है।

अतः कहा जा सकता है कि मौखिक इतिहास किसी भी क्षेत्र में उन अनछुये पहलुओं को सम्पूर्णता प्रदान करतें है। जिन्हें किसी तरह से अभिलेखीय कागजात पूर्ण नही कर सकते हैं। ऐसा नही कि मौखिक इतिहास अपने में सम्पूर्णता लिये हुये होते हैं। क्योकि यह पूरी तस्वीर को नही दिखा सकती है। परन्तु यह प्रमाणों के जांचने में सहायक होता है। इसके माध्यम से हम लिखित स्रोतों को पुनः जांच करके देख सकते हैं, कि सरकारी प्रपत्र इस घटना को किस प्रकार से दर्शाते है। अभिलेखपाल को मौखिक इतिहास स्रोतों को चुनने में बहुत ही सावधानी बरतनी चाहिए हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि वह स्रोत जो अभिलेखपाल चुन रहा है वह प्रमाणिक है या नहीं क्योकि कोई भी अप्रमाणिक स्रोत इतिहास के स्वरूप को समाप्त कर सकता है। अतः प्रमाणिकता जानने के लिए पहले घटना की विस्तृत जानकारी होनी चाहिए जिससे सम्बन्धित हमनें मौखिक

साधन को चुना है। इसी के साथ साक्षात्कार की लिखित प्रति पर हमें उस व्यक्ति के हस्ताक्षर लेने चाहिए इसके साथ साथ हमें उस साक्षात्कार को अन्य मुख्य व्यक्तियों के साथ भी मिलान करना चाहिए जिसे इतिहासकार उन स्रोतों से स्पष्ट इतिहास लेखन कर सकें। परन्तु आज भी मौखिक स्रोतों का प्रयोग पेशेवर इतिहासकारों के द्वारा प्रयुक्त नहीं किया जाता है। यद्यपि यह क्षेत्र इतिहासकारों द्वारा स्वीकार्य नहीं है परन्तु यह इतिहास लेखन के क्षेत्र में एक नई कडी का निर्माण कर रही है जो एक दिन अवश्य ही स्वीकृत होगी।

संयुक्त राष्ट्र संघ में यूनेस्को कार्यक्रम के तहत कई देशों जैसे कीनिया आदि में मौखिक इतिहास पर अनेकों परियोजनायें चलाई जा रही है। भारत में भी कई अभिलेखागारों चाहे वो प्राईवेट अभिलेखागार जैसे कि तीन मूर्ति अभिलेखागार, संग्रहालय तथा पुस्तकालय हो या फिर राज्य अभिलेखागार कर्नाटका हों मौखिक इतिहास पर विस्तृत परियोजनायें चलाई जा रही है। जो इतिहास के इस क्षेत्र के भारत में विकास की और इंगित करता है। यद्यपि लोक अभिलेख अधिनियम 1993 में मौखिक स्रोतों के सन्दर्भ में कुछ विशेष नही कहा गया है। परन्तु 1976 में राजस्थान के बीकानेर में हुई भारतीय इतिहास अभिलेख आयोग की बैठक में प्रो0 ओ. पी. भटनागर ने मौखिक इतिहास के लिए राष्ट्रीय अभिलेखागार में मौखिक इतिहास अभिलेख कार्यालय खोलने के सन्दर्भ में एक संकल्पपत्र प्रस्तुत किया था। परन्तु बाद में प0 बंगाल तथा कुछ एक अभिलेखागारों द्वारा इसको स्वीकार किया गया। 1993 में लोक अभिलेख अधिनियम में इसके बारे में कुछ नहीं कहा गया परन्तु 2000 में साइबर कानुन बनने के बाद जब श्रवण, दृश्य स्रोतों को कानुनी तौर पर स्वीकार किया गया तब से ही मौखिक स्रोतों की इतिहास लेखन में भी पहचान बढ़ी है। मौखिक स्रोत सहित सभी स्रोत इतिहास के सम्पूर्णताः को दिखाता है तथा इतिहास को उत्कृष्ट रूप में प्रस्तुत करने में सहायता करता है। सभी पेशेवर इतिहासकार जब इतिहास की कड़ियों को जोडने के लिये, मौखिक इतिहास का प्रयोग करना प्रारम्भ कर देगें तो भारतीय इतिहास या कहें मुख्यताः आन्दोलनों के इतिहास तथा सामाजिक इतिहास को पुर्नलेखन में सहायता प्राप्त होगी।

जीवन – ऊर्जा

सविता वशिष्ठ
मधु विहार, सांई लोक, देहरादून

ऊर्जा का हमारे जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। हमें जिन्दा रहने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिसके लिए हम भोजन करते हैं, जल पीते हैं, वायु ग्रहण करते हैं, हम व्यायाम करते हैं, जिससे हमारा शरीर स्वस्थ बना रहे। यूँ तो हम ऊर्जावान बने रहने के लिए कई यत्न करते हैं, परन्तु क्या कभी ये विचार आया कि हमें शारीरिक के साथ–साथ मानसिक ऊर्जा भी चाहिए, और उसके लिए मन को भी व्यायाम की आवश्यकता होगी । मन को स्वस्थ और दृढ़ बनाना है तो हमें उसको भी व्यायाम कराना होगा। मन का व्यायाम, मन को साधने से होगा।

हमारा मन बड़ा चंचल होता है और उसकी चंचलता ही विकार उत्पन्न करती है। विकार से मनुष्य में दम्भ, मैं और क्रोध उत्पन्न होता है। मैं ही विष बनकर शरीर को बीमारी देता है, सबसे पहले हमें अपने भीतर देखना होगा और भूल जाने और माफ करने की आदत बनानी होगी। हम न कुछ भूलना चाहते हैं, न बदलना। हम प्रतिरोध, क्रोध, बदले की भावना में अपनी विपुल ऊर्जा व्यर्थ कर देते हैं।

एक अच्छा समाज बनाने के लिए मन को भी सुदृढ़ बनाना होगा। ऊर्जा संवेग और जीवन शक्ति तलाशना ही मन का स्वस्थ व्यायाम है। इसके लिए हमें विपुल उर्जा चाहिए। मन को इतना परिमार्जित करना होगा कि हमारे पास हर दिन एक नया और तरोताजा मन हो। थके हारे मन से एक अच्छे व्यक्तित्व का विकास सही नही होता है। मन को सकारात्मक विचार से मजबूत बनाना होगा।

अक्सर लोग दूसरे व्यक्ति की छोटी से छोटी गलती को तलाशने में तनिक भी देर नही लगाते, वही अपनी बड़ी से बड़ी गलती को नजर अंदाज कर देते है। जो व्यक्ति सहजता में जीवन में अपनी गलती को मान लेता है, वही जीवन में सकारात्मक सोच एवम् अध्यात्म के पथ पर अग्रसर होकर अपने मन को व जीवन को सही दिशा प्रदान करता है। हर किसी के वश की बात नही कि वह अपनी गलती स्वीकार करे, विरले ही ऐसा साहस कर पाते हैं। अधिकांश अपने अवगुण को छुपा कर परदोष चिंतन करते है। हमारा अहम हमें झुकने की इजाजत नहीं देता। ऐसा करके हम दूसरों को नहीं, स्वयं को ही मुर्ख बनाते हैं एवम् मानसिक तौर पर कमजोर होते जाते हैं।

मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि जो व्यक्ति अपनी असफलताओं को, अपनी गलतियों को मन से स्वीकार कर लेता है, उसका जीवन पहले से अधिक सुन्दर व ऊर्जावान हो जाता है। उसमें आत्मविश्वास एवम् सद्गुणों का विकास होता है, नकारात्मक विचार दूर जाने लगते हैं, ऐसा व्यक्ति ईश्वर के अधिक करीब जाने लगता है। जो अपने मन के अन्दर नहीं झांक सकते और अपनी गलती स्वीकार करने का साहस नही रखते, उनके अन्दर से प्रेम, दया और कर्तव्य का लोप होने लगता है। ऐसे लोग अपने जीवन में उदासीन रहने लगते है। उनके अन्दर एक भावनात्मक खालीपन उत्पन्न हो जाता है।

किसी देवता को प्रसन्न करने से ज्यादा खुद को देवता स्वरूप बना लेना ज्यादा सरल है। देवता संस्कृत के दिव् धातु से बना है, जिसका अर्थ होता है, प्रकाश। सूर्य को प्रथम एवं प्रत्यक्ष देव इसलिए कहा जाता है, क्योंकि वह संसार को प्रकाश तथा जड़ – चेतन को ऊर्जा प्रकट रूप से प्रदान करता है। ऐसे ही जब स्वयं के या किसी अन्य व्यक्ति के जीवन में अंधेरा दिखाई पड़े तो उसे आत्म बल की ऊर्जा देकर कोई भी व्यक्ति देवता बन सकता है। हम जब भी किसी देवी या देवता की पूजा करते हैं, तो ये अवश्य ध्यान दें कि वो क्यों पूजनीय हुए? जिन कारणों से वे पूजनीय और वन्दनीय हुए, क्या उनमें से कोई एक आचरण भी हम अपने जीवन में ला सकते हैं? कोई भी एक अच्छा गुण यदि जीवन में लागू करने का प्रयास करेंगे तो एक सुन्दर व्यक्तित्व का निर्माण कर पायेंगे।

ऐसा तो नहीं है कि हम पूजा तो विष्णु, शंकर और राम, कृष्ण की करें और आचरण, रावण, कंस और जालंधर जैसे हो :– रावण हो या कंस हो, चाहे धृतराष्ट्र जैसा प्रतापी राजा हो, ये अपने जीवन में हर पल डरे डरे रहे, ये डर ही व्यक्ति के शरीर और मन पर घातक असर

करता है। जिसने डर को जीत लिया, वह राम हो गया, जो डरता रहा वह रावण हो गया। जीवन में, मैं का होना ही पतन का कारण है, जब राम से मां ने पूछा कि बेटा रावण को कैसे मारा तो श्री राम ने उत्तर दिया कि रावण को मैने नही, मैं ने मारा। मैं अर्थात अहंकार, अहंकार ही पतन का कारण है।

जब भी कोई व्यक्ति छल, कपट, धोखा, शोषण और उत्पीड़न में लगता है, तो एक अज्ञात भय उसके मन में घर कर जाता है। जबकि सदाचार से जीवन जीने वाला व्यक्ति आत्म बल से मजबूत होता है। गोस्वामी तुलसीदास ने ***'धीरज, धर्म, मित्र अरू नारी, आपद काल परिखहौं चारि''*** चौपाई के माध्यम से यह संदेश दिया है कि विपरीत स्थिति या अंधकार युक्त गुण मनुष्य की मनः स्थिति की परीक्षा लेते हैं। इस स्थिति में सदैव धैर्य बनाये रखना चाहिए, नकारात्मक कदम उठा लेने में भयंकर परिणाम होते है।

जीवन समस्याओं और उलझनों से भरा पड़ा है, समय हमेशा एक जैसा नही रहता, सुख है तो दुःख भी आने वाले हैं। इस सत्य को पूरी तरह से स्वीकार करने वाला व्यक्ति किसी भी अप्रिय स्थिति को अनहोनी समझकर नही देखता। ऐसे लोग तलाशने पर बहुत कम मिले शायद, पर हैं अवश्य। जो स्वयं को शरीर न समझ कर शरीरी समझते हैं वो सुख – दुख में समान आचरण करते हैं। शरीर पंचभूत तत्वों में बना है, और शरीरी है आत्मा, यानि वह सच्चिदानंद स्वरूप जो सुख दुख से परे है यह भ्रम चाल लेना कि जीवन में सदा सुख ही है, निर्बाधता है, ऐसी सोच विपत्ति के समय हमें कमजोर व भयभीत बना देती है, कमजोर और डरा हुआ मन कोई आश्रय, अवलम्बन ढूंढने लगता है, ऐसा सिर्फ उन व्यक्तियों के साथ होता है जिन्हें स्वयं पर विश्वास नही होता। जीवन के सत्य से जितनी दूरी होगी, छोटी से छोटी समस्या भी उतनी बड़ी दिखाई देगी। व्यक्ति की दीनहीनता भी उतनी ही बढ़ जाती है।

सृष्टि की रचना उसने की है, जीवन भी उसने ही दिया है, जीवन के पल–क्षण सब उसने ही तय किये हैं। सुख–दुख हमारे प्रारब्ध से प्राप्त होते है, पूरा संसार उसकी इच्छा और आज्ञा में है। 'मैं' केवल एक भ्रम है, जो व्यक्ति ऐसी सोच रखते हैं, वे कभी विचलित नही होते।

हर समस्या व संकट का मूल कारण हम स्वयं हैं, समस्यायें तो स्वयं के सुधार का अवसर हमें देती है। मानव जीवन में जाने–अनजाने हमसे पाप कर्म होते ही रहते हैं। परमात्मा चूंकि दयालु भी है, तो वह शरणागत् पर दया करते ही हैं। तात्पर्य यह है कि आध्यात्मिक गुण भी हमारे मन को स्वच्छ एवं सुदृढ़ बनाता है। ईश्वर का ध्यान भी मानसिक व्यायाम है, आत्मबल को ऊँचा करता है। संकट के समय ईश्वर को आधार बनाने से मन को बहुत राहत मिलती है, जीवन की राह सुगम हो जाती है, और हमारे मन को समस्याओं एवं बाधाओं को सामना करने की ऊर्जा प्राप्त होती है। हमारे जीवन में सेवा का भाव भी आवश्यक है, यह मानव हदय के भीतर उत्पन्न हाने वाला वह मिशनरी भाव है, जिसका आर्विभाव, स्वहित की अपेक्षा लोक हित के उद्देश्य से निःस्वार्थ रुप से हृदय कमल में होता है। सेवा का उद्देश्य पाना नहीं, अपितु प्राण पण से अपने प्रिय या अभीष्ट को समर्पित होना है। इसका पारितोषिक भौतिक नहीं बल्कि अभौतिक और अनुभूतिपूरक होता है। सेवा शाश्वत आनन्द प्रदान करने वाली अनमोल और कभी न खत्म होने वाली आंतरिक खुशी प्रदान करती है। सेवा से हदय सर्वथा प्रफुल्लित और आनंदित रहता है।

दूसरे अर्थों में सेवा से मिलने वाले सुख एवम् शान्ति का स्थान संसार का कोई भी भौतिक सुख या उपलब्धि नही ले सकती। नौकरी भी एक प्रकार की सेवा ही है, लेकिन इससे मिलने वाला पारितोषिक भौतिक रूप से उपस्थित होकर क्षणिक सुख की सृष्टि रचता है। दूसरे ही क्षण उसकी प्राप्ति से अतृप्ति, असंतोष, निराशा, घृणा, पश्चाताप, अरूचि आदि नकारात्मक भाव उत्पन्न होने लगते हैं, सच्ची सेवा का पारितोषिक तो मन की बगिया को हरा भरा कर देता है। आनन्द एवम् खुशी को बहुगुणित और प्रफुल्लित रखता है। सेवा ईश्वर का स्थायी सानिध्य पाने का एक आनंददायी मार्ग है।

यह भी जरूरी है कि मन को स्वस्थ रखने के लिए, ऊर्जावान बनाये रखने के लिए हंसना और मुस्कराना सीखे । एक निश्छल मुस्कान से हम सबको, अपना बना सकते हैं, किसी से भी मिलें, मुस्कुरा कर मिलें, हमारा मन तो प्रसन्न होता ही है, सामने वाले का भी मन प्रसन्न हो जाता है। विनोद प्रिय होने का और मुस्कुराने का एकमात्र अधिकार मानव को ही प्राप्त है। हर घड़ी, हर उस पल में जब हम मुस्कुरा रहे होते हैं, ईश्वर की

आराधना कर रहे होते हैं। चिकित्सा विज्ञान भी मानता है कि हंसने से तमाम रोग दूर होते हैं। छोटे बच्चों की खूबसूरती का राज ही उनकी मुस्कुराहट है। जीवन में अगर सबसे कीमती चीज कोई है तो वह मुस्कुराहट है। मानव शरीर चित्रों में भगवान को सदैव मुस्कुराते हुए दिखाया जाता है, अर्थात जहां मुस्कुराहट है, वहां भगवान है, दैत्यों के चित्त में क्रोध दिखाया जाता है, जहां क्रोध है, मतलब वहां से भगवान हट गये।

सारांश यह है कि जीवन में अपने तन के साथ मन का भी ख्याल रखिये, तंदरूस्त रहिए, सेवा भाव, विनोद प्रियता और अध्यात्म को अपने जीवन में शामिल करिये, आप भी खुश रहेंगे, आपके आस—पास भी सब प्रसन्न रहेंगे, यही हम सब की जीवन ऊर्जा है।

उत्तराखण्ड के कुछ संक्षिप्त तथ्य

संकलन कर्ता : एन0के0 जुयाल
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

आस्था का मंदिर हनोल महासू देवता

उत्तरकाशी व देहरादून जनपद की सीमा पर चकराता से लगभग 100 किमी की दूरी पर तमसा (टौंस नदी) के किनारे ग्राम हनोल में महासू देवता का मंदिर जनजातीय क्षेत्र जौनसार–बावर का प्रसिद्ध आस्था का केन्द्र है। जौनसार–बावर का यह प्रमुख क्षेत्रीय देवता है। महासू देवता का प्रसिद्ध मंदिर ग्राम हनोल में अति प्राचीन परम्परा वास्तुकला के नागर शैली में बना हुआ है। पौराणिक कथा के अनुसार किरमिक नामक राक्षस के आतंक से क्षेत्रवासियों को छुटकारा दिलाने के लिए हुणाभाट नामक ब्राहमण ने भगवान शिव और शक्ति की पूजा/तपस्या की। भगवान शिव और शक्ति के प्रसन्न होने पर मैन्द्रथ–हनोल में चार भाई महासू की उत्पत्ति हुयी और महासू देवता ने किरमिक नामक राक्षस का वध कर क्षेत्रीय जनता को इस राक्षस के आतंक से मुक्ति दिलाई और तभी से लोगों ने महासू देवता को अपना कुल आराध्य देव माना और पूजा अर्चना शुरू की। बोठा महासू, बाशिक, पवासी एवं चालदा चार महासू भाई हैं। बोठा महासू देवता का मुख्य मंदिर हनोल में है। बोठा महासू देवता को न्याय का देवता भी कहा जाता है। उनका निर्णय स्थानीय लोगों में सर्वमान्य होता है। भारतीय सर्वेक्षण विभाग के अनुसार महासू मंदिर हनोल में 9वीं से 10वीं शताब्दी का बताया जाता है। हनोल परचाधारी देवता है। उसके सम्मुख झूठ नही बोला जाता है। सम्पूर्ण जन मानस की इसके प्रति अपार श्रद्धा है। इसीलिए यहाँ मंदिर में दूर–दूर से जनमानस/लोग आते हैं और अपने आराध्य महासू देवता की पूजा अर्चना करते हैं।

रानी कर्णावती (सन् 1635–1640)

महीपति शाह की मृत्यु के बाद उनकी रानी कर्णावती ने शासन संभाला। अभी महीपति शाह का पुत्र पृथ्वीपति शाह छोटा था। तब माता कर्णावती ने संरक्षिका के रूप में शासन किया था। इस समय प्रमुख सेनापति माधोसिंह भण्डारी, गजे सिंह भण्डारी, बनयारी दास तुंवर, दोस्तबेग लोदी रिखोला, पुरिया नैथानी आदि थे।

इस समय चांदपुर गढ़ी क्षेत्र के कठैतों का भी राज दरबार में दबदबा था। पांच भाई कठैतों ने चाल खेलनी शुरू कर दी, वे छोटे बालक ओर रानी की हत्या करके राज्य हथियाने की साजिश पर लगे थे। गजेसिंह भण्डारी और शंकर डोभाल रानी के पक्षधर थे। कठैतों ने उनको चाल जाल में डालकर मंरवा डाला। कठैतों की साजिश से भयभीत होकर पुरिया नैथानी ने छोटे कुंवर पृथ्वीपति शाह को उठा कर छुपते छुपाते अपने घर नैथाणा (पट्टी मनियारस्यूँ) में ले आया। दो साल तक बालक वहीं लुकुन्दर गढ़ी में पुरिया नैथानी तथा क्षेत्रीय वीरों की सुरक्षा में रहा।

रानी कर्णावती के राज्य शासन के समय दिल्ली में शाहजहाँ का शासन था और सिरमौर में मान्धाता प्रकाश का था। शाहजहॉ के फौजदार नजावत खां ने सिरमौर की सेना के साथ मिलकर गढ़वाल राज्य पर आक्रमण कर दिया। नजावत खां ने दूत भेजकर दस लाख रूपये और अधीनता मानने को कहा। रानी ने भी विश्वास दिलाया कि शीघ्र ही बात हो जायेगी। नजावत खां पड़ाव डाल कर श्रीनगर से 60 कि0मी0 दूर बैठा रहा। डेढ़ माह तक उसकी सेना बीमारी–भुखमरी से परेशान हो गई। रानी ने बिन्सर देवता की पूजा कर संकट दूर करने की प्रार्थना की। ईश्वर की कृपा से भीषण वर्षा बड़े–बड़े ओलों की वृष्टि से नजावत खॉ की सेना के सैनिक मरने लगे। जो शेष बचे थे उन्हें रानी कर्णावती के सैनिकों ने पकड़ा और रानी कर्णावती ने उनके नाम–कान काट कर भगा दिया। तब से रानी कर्णावती को नाक कट्टी रानी भी कहा जाता है। इन्हीं के नाम से देहरादून स्थित करनपुर भी है।

भारतीय संस्कृति में हिन्दी के बारह महीनों का महत्व

रघुवीर सिंह नेगी
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

यों तो वर्तमान में अंग्रेजी महीनों का ही प्रचलन है जैसे जनवरी से दिसम्बर तक बारह महीनों का एक वर्ष माना गया हैं उसी प्रकार हिन्दी के बारह महीनों का भी एक वर्ष होता है। जो दो प्रकार के विधान से चलता है – (1) चान्द्रमास (2) सौरमास

(1) चान्द्रमास : इसमें चन्द्रमा के संचार से शुक्ल पक्ष एवं कृष्ण पक्ष होते हैं जो पन्द्रह–पन्द्रह दिन के होते हैं तथा पूर्णमासी से अमावस्या तक तीस दिन का एक मास होता है जिसका हमारे धार्मिक एवं मांगलिक कार्यो में विशेष महत्व होता है।

(2) सौरमास : इस मास में सूर्य को एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करने में 30 दिन का समय लगता है इसे हम सूर्य संक्रान्ति कहते हैं तथा तीस दिन की अवधि को सौर मास कहते हैं।

इन महीनो का महत्व निम्न प्रकार से वर्णित किया गया है।

1. चैत्र महीना पहले आता, सर्दी को है दूर भगाता

चैत्र महीने को हिन्दी महीनों में प्रथम माह कहा गया है इस महीने का विशेष महत्व यह है कि सर्दी के बाद जब सूर्य मीन राशि में संचार करता है तथा संवत्सरीय नवरात्र का आगमन होता है एवं चांद्र मास में चैत्र शुल्क पक्ष की प्रतिपदा को कलयुग के आगमन का दिन भी कहा गया है। इसलिए इस माह को साल का प्रथम माह कहा गया है, इस दिन जो वार होता है उसी को वर्ष का राजा जाना जाता है जैसे – इस वर्ष यह प्रतिपदा रविवार को होने से वर्ष का राजा सूर्य को माना गया है जिसका हमारे धार्मिक एवं मांगालिक कार्यो के सम्पादन में विशेष महत्व होता है।

2. बैशाख बसन्त बहारें लाता, बागों में रंग–बिरंगे फूल सजाता।

बैशाख वर्ष का दूसरा महीना होता है जो बैशाखी के दिन जब सूर्य मेष राषि में प्रवेश करता है। इस दिन का विशेष महत्व यह है कि मेष राशि में प्रवेश करता है वही वर्ष भर में राजा का मंत्री होता है तथा दोनों मिलकर वर्ष–भर के कार्यो का निपटारा करते हैं। इस वर्ष बैशाखी शनिवार को होने वे वर्ष के राजा का मंत्री शनि को माना गया है। बैशाख को बसन्त के आगमन का महीना भी कहते है। किसान की रबी की फसल भी इसी महीने पककर तैयार होती है एवं इस महीने में अधिकतर मांगलिक एवं धार्मिक कार्यों का भी आयोजन होता है।

3. गर्मी का है ज्येष्ठ महीना बैठे–बैठे बहे पसीना

बसन्त बहार के बाद सूर्य का संचार वृष राशि पर होता है जिसे ज्येष्ठ (जेठ) महीना कहते हैं। इस महीने सूर्य गर्मी की चरमसीमा पर होता तथा सभी जगह गर्मी से त्राहि–त्राहि सी मची रहती है। प्राकृतिक स्रोतों का जल सूखने से चारों तरफ पानी की किल्लत शुरू हो जाती है। दैनिक जीवन की कार्य – प्रणाली में विशेष परिवर्तन आ जाता है। मनुष्य काम से अधिक आराम करना पसन्द करता है।

4. आषाढ़ मानसूनी मास कहलाता गर्मी से कुछ राहत दिलाता

सूर्य की मिथुन राशि में प्रवेश दिन को आषाढ़ संक्रान्ति कहते हैं। महीने भर सूर्य इसी राशि पर संचार करते हैं इस महीने में दक्षिण–पश्चिमी मानसून दक्षिणी क्षेत्र एवं बंगाल की खाड़ी से भारत में पहुंचता है तथा तेज आँधी तूफान के साथ बारिश की तेज बौछारें करता है। इस मास में किसान भीषण गर्मी से राहत पाकर खरीफ की फसल बोने की तैयारी शुरू करता है।

5. श्रावण की है बात निराली चारों तरफ फैली हरियाली

श्रावण (सावन) मास सूर्य की कर्क राशि में प्रवेश को कहते है। महीने भर सूर्य बादलों के साथ – साथ छुपन–छुपाई करता रहता है। वर्षा अपनी चरम सीमा पर होती है तथा चारों तरफ हरियाली छा जाती है। इस महीने को शिव मास भी कहा जाता है इसलिए इस महीने शिव भगवान की विशेष पूजा – अर्चना की जाती है एवं भाई–बहिन के रक्षा – बन्धन का पवित्र त्यौहार भी इसी महीने में आता है।

6. भाद्रपद काला मास कहलाता, काली रात में जी घबराता

भाद्रपद (भादो) का महीना सूर्य की सिंह राशि में प्रवेश को कहते हैं। इस महीने में बारिश एवं धूप दोनों ही अत्यधिक तेज होती है तथा आसमान में काले – बादल अधिक होने से बिजली की कड़क तथा रातें अंधेरी होने के कारण रात में घर से बाहर निकलने में डर लगता है।

7. आश्विन शरदीय मास कहलाता घर–घर पितृ श्राद्व करवाता

आश्विन (असूज–क्वार) आदि नामों से इस मास को संबोधित किया जाता है। इस महीने सूर्य कन्या राशि में संचार करता है इस महीने का महत्व दो प्रकार से होता हैं एक तो पितृ श्राद्व घर–घर में किया जाता हैं दूसरा शरदीय नवरात्र का पूजन भी इसी मास में किया जाता है बुराई पर अच्छाई का विजय, दशहरा पर्व भी इसी माह में मनाया जाता है। बारिशें कम होने से खरीफ की फसल भी पककर तैयार हो जाती है।

8. कार्तिक की है चाँदनी प्यारी, आँखों को लगती है न्यारी

कार्तिक मास में सूर्य तुला राशि में प्रवेश करके पूर्णमास इसी राशि पर संचार करता है तथा वर्षा के बाद आसमान भी साफ हो जाता है। रात को चांदनी भी बहुत प्यारी लगती है। इसी मास दीपावली का पर्व की मनाया जाता है तथा इस मास में सूर्य पूजन का भी विशेष महत्व माना गया । दीपावली पर्व हर वर्ष कार्तिक मास की अमावस की रात्रि में मनाया जाता है।

9. अगहन फसली मास कहलाता, ज्वार बाजरा घर–घर आता

अगहन (मंगसीर, मार्गशीर्ष, मघैर) नामों से इस महीने को जाना जाता है। इस मास में सूर्य वृश्चिक राशि में संचार करता है। किसान अपनी खरीफ की फसल को बड़े हर्षोल्लास से अपने घर में लाता है तथा रबी की फसल बोने की तैयारी भी करता है। इस महीने को सर्वश्रेष्ठ मास भी कहा जाता है इसलिए इसमें धार्मिक एवं मांगालिक कार्यो का विशेष आयोजन होता है।

10. पौष महीना ठण्डा भारी, थर–थर कांपे नर और नारी

पौष महीने में सूर्य धनु राशि में संचार करता है तथा सूर्य की गर्मी में हल्कापन आ जाता है जिससे ठण्डक की दस्तक शुरू हो जाती है। पहाड़ी क्षेत्रों में बर्फ पड़नी शुरू हो जाती है और बारिश के कारण ठण्ड भी अधिक बढ़ जाती है। गर्म कपड़े रजाई–कम्बल एवं खाने–पीने की गर्म वस्तुओं का सहारा लेना पड़ता है।

11. माध में ठण्डी हवा जब चलती, पाला पडता खेती जलती

माघ महीना सूर्य की मकर राशि में प्रवेश को कहते हैं इसलिए महीने में लोहड़ी एवं मकर–संक्रान्ति का विशेष महत्व होता है। इस महीने में पश्चिमी ठण्डी हवाऐं चलने से बारिश एवं ठण्ड अधिक होती है जिससे खरीफ की फसल को नुकसान पहुंचता है। मकर संक्रान्ति से ही सूर्य उत्तरायन होने से धार्मिक एवं मांगलिक कार्यो का पुनः सिलसिला शुरू हो जाता है। इसे खिचड़ी, तिल संक्रान्ति आदि नामों से भी जाना जाता है।

12. फाल्गुन सबसे पीछे आता, होली का हुल्लड़ दिखलाता

फाल्गुन (फागुन) मास में कुंभ राशि में प्रवेश कर पूर्णमास इसी राशि में संचार करता है। इस महीने में होली का पर्व भी विशेष रूप से मनाया जाता है। इस महीने को त्यौहारों एवं अपनों के मिलन का महीना भी कहा जाता है। इस महीने में शुभ कार्य भी विशेष रूप से सम्पन्न होते हैं। होली हर वर्ष फाल्गुन मास की पूर्णिमा तिथि को ही मनाई जाती है।

इस प्रकार हिन्दी के बारह महीनो का हमारे जीवन में विशेष महत्व है तथा हिन्दी एवं अंग्रेजी महीने साथ–साथ चलकर हमारे सभी धार्मिक मांगलिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक कार्यों के संचालन में विशेष पहचान बन जाते है। जिस प्रकार घड़ी की सुइयां हमें सेकेण्ड मिनट एवं घण्टे का बोध कराती है। उसी प्रकार तिथि, मास एवं वर्ष हमें हमारी संस्कृति का प्रमाण देते है जिससे हमारा जीवन सुचारू एवं सन्तुष्टि पूर्ण ढंग से व्यतीत होता है।

भूकंप की तीव्रता एवं परिमाण

सुशील कुमार
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

जब भी भूकंप आता है और टी.वी. पर, अखबारों में उसकी रिर्पोटिंग होती है तो सभी मीडिया वाले बताते हैं। उदाहरण के लिए गढ़वाल के उत्तर में घनसाली के पास एक भूकंप रिकार्ड किया गया जिसकी रिक्टर पैमाने पर तीव्रता 4.4 थी। यही नहीं, सभी न्यूज चैनलों पर भी यही प्रसारित होता है कि भूकंप की तीव्रता 4.4 आंकी गई। इसी बात को लेकर मुझे लगा कि मैं इस लेख के माध्यम से अश्मिका पत्रिका द्वारा भूकंप की तीव्रता एवं परिमाण के बारे में लोगों का ज्ञानवर्धन करुं ताकि वे समझ सके कि भूकंप की तीव्रता एवं परिमाण दोनों अलग–अलग भूकंप के पैमाने हैं। रिक्टर पैमाने पर हम भूकंप के परिमाण का आकलन करते हैं उसकी तीव्रता का नहीं। भूकंप की तीव्रता इसके उद्गम स्थान पर अधिकतम होती है और उससे दूर जाने पर घटती जाती है। किसी स्थान पर भूकंप की तीव्रता वहां पर भूमि में गति एवं मनुष्य पर प्रभाव के रुप में आंकी जाती है तथा भूमि में गति/खासकर इसके ऊपर बनी इमारतों में होने वाली हानि से एवं अन्य वस्तुओं में गति इत्यादि से किया जाता है। भूकंप की तीव्रता मरकाली पैमाने पर नापी जाती है। इस पैमाने को 1902 में मरकाली ने बनाया था तथा इसे 1931 में बुड तथा न्यूमैन ने संशोधित किया था। अब इसे 'संशोधित मरकाली पैमाना' भी कहते हैं। यह पैमाना मनुष्य द्वारा मापे गए भूकंप के विनाश पर निर्भर करता है अतः गुणात्मक है, परिमाणात्मक नही है। इस कारण यह वैज्ञानिक दृष्टि से यथार्थ नही माना जा सकता, परन्तु सरल एवं सहज होने के कारण प्रायः इसका प्रयोग किया जाता है। इसके अनुसार भूकंप की तीव्रता को I से XII तक व्यक्त किया जाता है। भूकंप के उद्गम स्थान से दूर जाने पर उसकी तीव्रता घटती जाती है परन्तु उसका परिमाण समान रहता है। मरकाली पैमाने पर तीव्रता I को केवल सिस्मोग्राफ द्वारा रिकार्ड किया जाता है वह मनुष्य द्वारा महसूस नही होती। तीव्रता II केवल कुछ ही संवेदनशील मनुष्यों को अनुभव होती है। तीव्रता III केवल आराम करते हुए मनुष्यों को अनुभव होती है। इसे 'अल्प' तीव्रता भी कहते हैं। तीव्रता IV

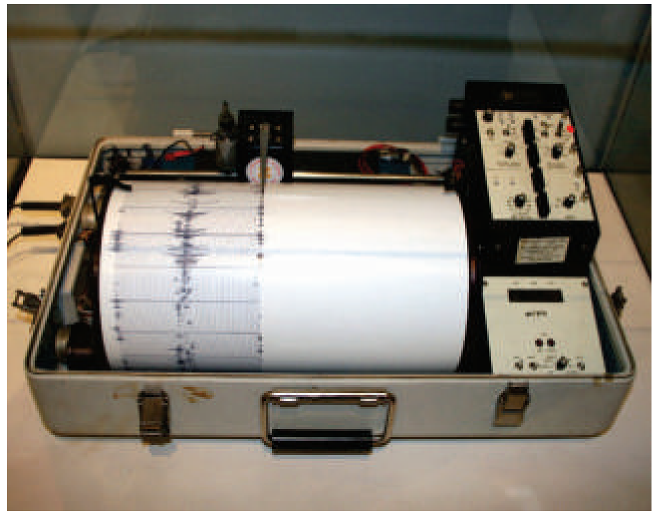

चित्र 1 : भूकम्पमापी

चलते हुए मनुष्य भी महसूस कर लेते है। इसमें खड़े हुए वाहनों में कंपन होता है। इसे 'साधारण' तीव्रता कहते हैं। तीव्रता V 'आप्रबल' होती है इसे सामान्यतः सभी मनुष्य महसूस कर लेते हैं और सोते हुए व्यक्ति जग जाते हैं, लटकती हुई घंटिया स्वतः बजने लगती हैं। तीव्रता VI 'प्रबल' होती है। इसमें तो लटकती हुई सभी वस्तुयें झूलने लगती हैं। 'अति प्रबल' तीव्रता VII में दीवारों में दरारें पड़ जाती हैं और प्लास्टर गिर जाते हैं। तीव्रता VIII 'विनाशकारी' होती है। इसमें कमजोर इमारते क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। तीव्रता IX 'विनष्टकारी' होती है। इसमें मकान धंस जाते हैं, भूमि में दरारें पड़ जाती है तथा पाइप लाइनें टूट जाती हैं। यह तीव्रता 6 से 7 परिमाण तक के भूकंप मं उत्पन्न होती है जैसे कि 1991 तथा 1999 में गढ़वाल में आए उत्तरकाशी एवं चमोली भूकंप जिनका परिमाण 6.8 था। मरकाली तीव्रता X 'विनाशी' होती है इसमें भूमि में लंबी दरारें पड़ जाती हैं इमारतें गिर जाती हैं रेलवे लाइन मुड जाती है तथा पहाड़ों में भूस्खलन होता है। इसके बाद मरकाली तीव्रता XI 'अतिविनाशी' होती है। इसमें कुछ ही इमारतें खड़ी रह पाती हैं भंयकर भूस्खलन होता है। रेलवे लाइन, पाइप लाइन, बिजली की तारें क्षतिग्रस्त हो जाती है, जगह–जगह पुल टूट जाते है।

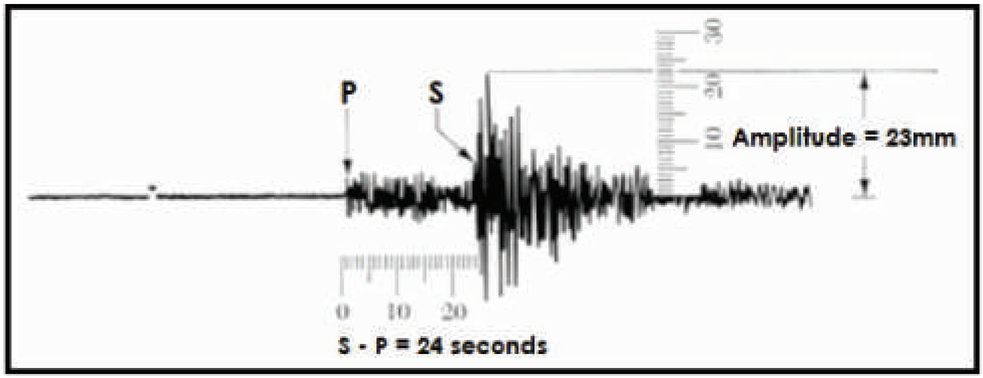

चित्र 2 : भूकम्प का रिकार्ड

मरकाली तीव्रता XII प्रलयकारी होती है। यह ग्रेट भूकंप जिनका परिमाण 8.0 से अधिक होता है उनमें उत्पन्न होती है। इसमें भूमि का त्वरण 9800 मिली मीटर /सेकेण्ड^2 या अधिक होता है तथा पदार्थ हवा में उछलने लगते हैं। 1897 को असम में आए 8.0 परिमाण के भूकंप में, 1934 में बिहार–नेपाल में आए 8.0 परिमाण के भूकंप एवं 1950 में आए असम भूकंप जिसका परिमाण 8.6 था इनमें तीव्रता मरकाली पैमाने पर XII उत्पन्न हुई थी। अब हम भूकंप के परिमाण की बात करेगें ताकि हम परिमाण को भलीभांति समझ कर तीव्रता एवं परिमाण में भेद समझ सकें। भूकंप का परिमाण उसके द्वारा मुक्त हुई ऊर्जा की माप है। यह भूकंपीय तरंगों के आयाम, त्वरण, आवृति तथा अन्य गणितीय बातों पर आधारित होता है। भूकंप के परिमाण को रिक्टर पैमाने पर मापा जाता है। इस पैमाने को चार्ल्स एफ0 रिक्टर ने 1935 में बनाया था। जिसे 1965 में बेनों गुटनबर्ग ने संशोधित किया था। यह आधार दस का लघुगणक आधारित पैमाना होता है। जो वुड–एंडर्सन टार्जन भूकंपमापी (चित्र 1) के द्वारा रिकार्ड किए गए भूकंप के सर्वाधिक विस्थापन का एम्प्लिट्यूड (चित्र 2) का लघुगणक निकालने पर मिलता है। इस लघुरुप में लोकल परिमाण M_L लिखते हैं।

$$M_L = \log_{10}(A_{max} / A_o)$$

लोकल परिमाण की प्रभावी मापन सीमा लगभग 6.8 होती है हालांकि इससे 1 से 9 तक के भूकंपों का परिमाण मापा जा सकता है। रिक्टर पैमाने पर मापे गए 6.0 परिमाण का भूकंप के कम्पन का आयाम 5.0 परिमाण के आयाम का दस गुणा होगा।

वीसैट तकनीकी व उसके अनुप्रयोग

छवि पंत पांडेय
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

मानव के जिज्ञासु मन, अपार कल्पनाशक्ति व विलक्षण बौद्धिक क्षमताओं का एक प्रमाण आधुनिक विज्ञान के रूप में परिलक्षित होता है। प्रकृति के विषय में अनुभवजन्य, सैद्धांतिक, व्यावहारिक तथा सुव्यवस्थित ज्ञान ही विज्ञान है। यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि मात्र पिछले कुछ दशकों में ही विज्ञान में जो युगांतिकारी परिवर्तन आये हैं वे मानव सभ्यता के पूर्ण ज्ञात इतिहास कि तुलना में कई अधिक जान पड़ते हैं। विज्ञान के चमत्कारिक आविष्कारों में सूचना प्रौद्योगिकी का विशिष्ट स्थान है। सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोगों से आज कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं है। सूचना तकनीकी के अनुप्रयोगों के फलस्वरूप पृथ्वी पर रहकर कहीं से भी सूचना का आदान–प्रदान क्षणमात्र में हो जाना केवल उपग्रह तकनीकी (सैटेलाइट टेक्नोलॉजी) के माध्यम से ही संभव है।

अपनी निश्चित कक्षा में पृथ्वी की परिक्रमा करते मानव निर्मित कृत्रिम उपग्रह के माध्यम से सूचना के आदान – प्रदान हेतु संपर्क साधने के लिए धरती पर स्टेशन की आवश्यकता अनिवार्य है। वीसैट एक छोटे आकार का दूरसंचार के लिए प्रयुक्त होने वाला द्वि–दिशात्मक धरतीबद्ध स्टेशन है जो उपग्रह के माध्यम से धरती पर तत्काल सूचना को प्रेक्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पृथ्वी के सापेक्ष स्थिर कक्षा में घूमने वाले उपग्रह जो जियो–स्टेशनरी या भू–समकालिक उपग्रह कहलाते हैं, वीसेट द्वारा सूचना सम्प्रेक्षण के लिए प्रयुक्त होते हैं। वीसैट स्टेशन मुख्य रूप से धरती पर स्थित दूरस्थ व दुर्लभ क्षेत्रों से सम्पर्क स्थापित करने के लिए प्रयोग में लिए जाते हैं।

सामान्यतः वीसैट ऐन्टेना 30 से 48 इंच व्यास का परवलयाकार थालीनुमा संरचना होती है जिसमे रेडियो संकेतों को प्रेक्षित व ग्रहण करने के लिए संप्रेक्षी–अभिग्राही यन्त्र (कन्वर्टर) लगे होते हैं। ऐन्टेना को उपयोगिता व सुविधानुसार जमीन पर लगाया जा सकता है, ईमारत या वाहन की छत पर, वायुयान पर, पानी के जहाज पर भी लगाया जा सकता है। आवश्यकता के अनुसार सिग्नल को प्रेक्षित करने के

चित्र 1 : वाडिया संस्थान, देहरादून की छत पर लगा वीसैट एंटेना जिसका उपयोग दुर्गम पहाड़ी क्षत्रों में लगे भूकंपमापी यंत्रों से भूकंप के आने की सूचना प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

लिए विभिन्न आवृतियों का उपयोग किया जाता है जिनको एल, सी, के, केयू बेंड रेडियो तरंगों की आवर्त पट्टी में बाँटा गया है। अंतिम उपयोगकर्ता को वीसैट के माध्यम से संकेत/सूचना को प्राप्त करने या भेजने के लिए ऐन्टेना का संयोजन अपने कंप्यूटर से करना होता है।

एक उपयोगकर्ता के लिए दूसरे के साथ सूचना के आदान प्रदान करने के लिए, प्रत्येक प्रसारण को पहले हब स्टेशन पर जाना होता है जो इसे उपग्रह के माध्यम से दूसरे उपयोगकर्ता के वीसैट एंटेना में पुनः सम्प्रेक्षित करता है। वीसैट के माध्यम से डाटा, ध्वनि व वीडियो संकेतों को सहजता से प्रेक्षित किया जा सकता है। डाटा प्रेक्षण दर आम तौर पर 56 के.बी./ सेकंड से 4 एम.बी./ सेकंड तक होती है।

वीसैट व्यापार, विज्ञान व व्यक्तिगत उपयोग के लिए सूचना के आदान प्रदान के उद्देश्य से विशेष रूप से निर्मित किया गया है जिसमें विशिष्ट तकनीकी और उपकरण का उपयोग निहित है जो प्रभावी दूरसंचार

चित्र 2 : वीसैट नेटवर्क सिस्टम का एक उदाहरण

और इंटरनेट कनेक्टिविटी की सुविधा प्रदान करते हैं। वीसैट तकनीकी के कुछ मुख्य अनुप्रयोग इस प्रकार हैं: क्रेडिट कार्ड सेवा; मतदान; बिक्री लेन–देन वे बैंक से सम्बंधित विभिन्न सेवाएं; दूरदराज के क्षेत्रों में सेटेलाइट– इंटनेट सेवा प्रदान करना, वीडियो के रूप में सूचना संप्रेक्षण; पुलिस निगरानी; पर्यावरणीय उद्देश्य; सैन्य संचालन; क्षेत्रीय उपयोग; आपदा और आपातकालीन राहत, यात्रा और पर्यटन; खनन और अन्वेषण, समाचार एजेंसी, आपातकालीन स्थान से सूचना का आदान–प्रदान; कृषि प्रयोजन; समुद्र में जहाज संचालन इत्यादि निहित हैं।

वीसैट टेक्नोलॉजी कॉर्पोरेट वाइड एरिया नेटवर्क के साथ छोटे नेटवर्क को संगठित करके व्यापार सम्बन्धी प्रक्रिया को तेज करने में सक्षम बनता है। छोटे निजी नेटवर्क तथा बड़े नेटवर्क दोनों के साथ अनुकूल होने के कारण इस तकनीक का प्रयोग व्यक्तियों और संगठनों दोनों के लिए किया जा सकता है जिसके लिए बहुभागी एंटेना की आवश्यकता होती है। दुर्गम क्षेत्रों और कर्मचारियों को ईमेल सुविधा, वीडियो संप्रेक्षण, टेलीफोन सुविधा, या इंटरनेट से सम्बंधित अन्य उपयोगों के लिए एक कारगर उपाय है। वीसैट तकनीक तुलनात्मक रूप में आसान, विश्वसनीय, सुरक्षित व कम लागत में व्यापक सेटेलाइट नेटिवकिंग सुविधा प्रदान करता है।

व्यापक रूप से उपयोग होने वाली वीसैट–सेटेलाइट तकनीकी के कुछ नुकसान भी हैं। नेटवर्क को सुचारु रूप से चलने में आने वाली प्रारंभिक लागत अधिक है साथ ही भू–समकालिक कक्षा में उपग्रहों का उपयोग होने की वजह से प्रत्येक सूचना सम्प्रेक्षण में 500 मिलीसेकंड न्यूनतम देरी होती है। यह उन अनुप्रयोग के साथ एक समस्या उत्पन्न कर सकता है जहां बिना व्यवधान सूचना सम्प्रेक्षण की आवश्यकता होती है। मौसम और अन्य पर्यावरणीय विपरीत परिस्थितियों का संकेतों की गुणवत्ता पर प्रभाव होना संभव है। वाह्य एंटेना की आवश्यकता होने की वजह से, उपग्रह के साथ संपर्क स्थापित करने के लिए निश्चित दिशा में आकाश का स्पष्ट होना आवश्यक है इसलिए कभी–कभी एक असामान्य छत या अन्य प्रकार के व्यवधान जैसे गगनचुम्बी इमारतीय संरचना समस्या बन सकती है।

आधुनिक वैश्वीकरण व सूचना क्रांति के इस दौर में वीसैट तकनीकी का सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण योगदान है।

मेघालय युग : पृथ्वी के इतिहास में एक नया युग

सुशील कुमार
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

हाल ही में यह बात चर्चा में है कि भू–वैज्ञानिकों ने धरती के इतिहास में एक नए युग 'मेघालय युग' की खोज की है। अंतर्राष्ट्रीय भू–वैज्ञानिक विज्ञान संघ (आई0यू0जी0एस0) ने अधिकारिक तौर पर इस नए चरण को स्वीकार कर लिया है।

आई0यू0जी0एस0 एक अंतर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन है जो भूविज्ञान के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए समर्पित है। इसकी स्थापना वर्ष 1961 में की गई थी। वर्तमान में 121 देशों के भू–वैज्ञानिकों का प्रतिनिधित्व आई0यू0जी0एस0 में 121 अनुपालन संगठनों के माध्यम से किया जाता है।

इसके दो प्रमुख बिन्दु है प्रथम भू–वैज्ञानिकों का मानना कि इस युग की शुरुआत 4200 साल पहले हुई थी और यह आज तक जारी है (चित्र 1)। द्वितीय भू वैज्ञानिक इतिहास के दृष्टिकोण से हम जिस युग में रह रहे हैं वह होलोसीन युग है। अब हम यदि होलासीन युग की बात करें तो होलोसीन युग का प्रारंभ लगभग 11700 साल पहले हुआ था एवं अंतर्राष्ट्रीय कालस्तरिकी चार्ट में होलोसीन युग को तीन उपवर्गो में बांटा गया है।

प्रथम उपवर्ग में होलोसीन युग की शुरुआत को ग्रीन लैडियरन (11700–8326 साल पूर्व) नाम दिया गया है यह वह युग था जब पृथ्वी हिमयुग से बाहर आयी थी। दूसरे उपवर्ग में मध्य होलोसीन युग को नार्थ ग्रिवियन (8326 –4200 वर्ष पूर्व) नाम दिया गया है एवं तीसरे उपवर्ग में यह दर्शाया गया है कि मेघालय युग होलोसीन युग का नवीनतम युग है। माना जाता है कि धरती का निर्माण 4.6 अरब साल पहले हुआ था।

तब से पृथ्वी के अस्तित्व को कई युगों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक युग प्रमुख घटनाओं जैसे महाद्वीपों का टूटना, महाद्वीपीय विस्थापन, पर्यावरण में परिवर्तन या धरती पर खास तरह के जानवरों और पौधों की उत्पत्ति पर आधारित है।

जिस वर्तमान काल में हम रह रहें हैं उसे होलोसीन युग के नाम से जाना जाता है, जिसमें पिछले 11700 सालों का इतिहास शामिल है तब से वहां के मौसम में पैदा हुई एक नाटकीय गर्मी से हम हिम युग से बाहर आये थे।

भूवैज्ञानिकों द्वारा की गई खोज के अनुसार 'मेघालय युग' की शुरुआत भंयकर सूखे के साथ हुई थी जिसका असर 200 सालों तक रहा। इस वजह से पूरे विश्व में कई सभ्यताएं खत्म हो गई थी।

इसी सूखे के कारण मिश्र, यूनान, सीरिया, फिलिस्तीन, मेसोपोटामिया, सिंधु घाटी और यांग्त्से नदी घाटी में खेती आधारित सभ्यताएं समाप्त हो गई थी।

इस युग का नाम 'मेघालय युग' इसलिए पड़ा क्योकि शोधकर्ताओं की अंतर्राष्ट्रीय टीम ने मेघालय की एक गुफा मावक्लूह जो कि मेघालय में 1290 मीटर की उचाई पर स्थित है एवं उसकी गिनती देश की दस सबसे लंबी एवं गहरी गुफाओं में होती है इसी गुफा की छत से लाखों वर्षों में टपके पानी में घुले खनिजों से बनी नीचे से ऊपर को जाती एक चट्टान (स्टैलैग्माइट) ने वैज्ञानिकों को ऐसे तथ्य मुहैया कराए, जिसके आधार पर इस अध्ययन ने धरती के इतिहास में घटी सबसे छोटी जलवायु घटना को परिभाषित करने में मदद की। इसी कारण इस युग को मेघालय युग के नाम से जानते है।

स्वाणी !

मनीष मेहता
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

बहुत खूबसूरत पहाड़ो सी है वो
चहकते हुए पंछियो सी है वो
बहते हुए पानी सा उसका चलना
खिलते हुए फूलो सा उसका हंसना
बहुत भाव खुद में समेटे हुए
जैसे सागर में पानी इकट्ठा हुआ
पतझड़ में खिलना
और खिल के महकना
बहुत बार उसने सिखाया
जीवन जीना बताया
ये मौसम, ये बारिश, ये उजाला
जिनसे चलती जीवन माला
दर्द आँखो में छिपा सभी से
न हुआ बयां कभी किसी से
दर्द की कीमत किसने जानी
वो सुन्दर वो स्वाणी
पहाड़ों की है जो रानी

बस्ती

संजीव कुमार
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

ठहर गई है शाम, ठहर गई है शाम, पहाड़ी ढालों पर ।
बिछुड़े चाँद से मिलने के लिये ।।
धुंघले होने लगे है रास्ते, देवदार की स्याह होती परछाइयों में कहीं ।
सिमटने लगे हैं लोग कोहरे की घनी होती चादर मे कहीं ।।
उडने लगी है, उड़ने लगी है धुल बढ़ने लगा है कांरवा ।
बस्ती की ओर।।
बजने लगी है घंटिया, बस्ती से दूर, नदी के किनारे।
मंदिर मे कहीं।।
ठहर गई है शाम, पहाड़ी ढालों पर, बिछुडे चांद से मिलने के लिये ।
धुंधले होने लगे है रास्ते देवदार की स्याह होती परछाइयों में कही।।
उठने लगा है धुंआ, दूर तलहटी की बस्ती में।
रोने लगा है बच्चा, मांगने लगा है एक रोटी।।
जलने लगे है चिराग, दूर बस्ती मे कही।
बंद हो गये है दरवाजे, डर के अहसास मे कहीं।।
खुली है कुछ खिडकियां, किसी के इन्तजार में कहीं।
ठहर गई है शाम, पहाड़ी ढालों पर, बिछुडे चाँद से मिलने के लिये ।।
धुंधले होने लगे है रास्ते, देवदार की स्याह होती परछाइयों में कहीं ।
उगले लगी है घास, कुछ उजड़ते मकानों पर बस्ती मे कहीं।।
बस्ती में ये हलचल कैसी, बस्ती में ये हलचल कैसी ।
कहीं कोई मुसाफिर आया जरूर है।।
टप से ढक गई हैं चोटियां, टप से ढक गई हैं चोटियां।
खामोश, स्याह अंधेरी रात में।।
मौत से जुझती, जीने की ललक में आखरी सांस की तरह ।
रिमझिम सावन की एक बरसात मे।।
ठहर गई है शाम, पहाड़ी ढालों पर बिछुडे चाँद से मिलने के लिये ।
धुंधले होने लगे हैं रास्ते देवदार की स्याह होती परछाईयों में कहीं।।

गांधारी

सविता वशिष्ठ
मधु विहार, सांई लोक, देहरादून

एक गांधारी हुई,
भारत काल में,
लाचार, आंखो पर बांधे पट्टी,
चाहा तो होगा, उसने भी,
जाने क्या कुछ कहना,
पर कह न पायी,
ना कुछ चाहा, कर पायी,
तब जो स्वयं प्रभु, तुम थे,
पर कुछ भी तो, ना रोक सकी वो,
आज भी कहाँ, बदला है कुछ भी,
वो ही दम्भी धृतराष्ट्र है, और वही दुर्योधन,
आज भी वही गांधारी है, घर घर में,
आंखों पर ममता की पट्टी बांधे,
पीड़ा सहती, हर पल डरती,
युग बदले, जीवन बदले,
पर नही बदली स्त्री की नियती,
स्त्री में क्यों खोट बनाये,
दर्द के मोती क्यों पहनाये,
वो भी तो तेरी ही कृति है,
नागफनी से प्रश्न खड़े हैं,
दे पाओगे उत्तर क्या तुम,
जीवन क्यूँ है चक्रव्यूह सा,
न कोई अभिमन्यु है अब,
न है अब कोई भी अर्जुन

जय गूगल भैया

डॉ. पंकज चौहान
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

जय गूगल, जय गूगल, जय गूगल भैया
न तेरी कोई जीजी न कोई तेरी मैया

चाचा –चाची, दोस्त –साथी सबको तूने सिखाया
न तेरा कोई अपना न कोई तेरा पराया
जो कोई न कर पाया वो तूने कर दिखाया
बड़े कठिन कामों को तूने सरल बनाया
जय गूगल, जय गूगल, जय गूगल भैया
न तेरी कोई जीजी न कोई तेरी मैया

जिसने भी एक बार तुझको है देखा
जीवन में उसके तूने खीची ज्ञान की रेखा
अनपढ़ को भी ज्ञान देता बुद्धि को मेवा
दुनियाँ में सबकी तूने पार कराई नैया
जय गूगल, जय गूगल, जय गूगल भैया
न तेरी कोई जीजी न कोई तेरी मैया

हिंदी को तू अंग्रेजी बना दे और अंग्रेजी को हिंदी
तमिल को तू तेलगू बना दे पजांबी को सिन्धी
भारत हो या इटली हो या फिर हो वो जेनेवा
हर गाँव हर देश की तू खूब करता सेवा
जय गूगल, जय गूगल, जय गूगल भैया
न तेरी कोई जीजी न कोई तेरी मैया

एक अरब लोगों को एक दिन में तू सिखलाता
न जाने कैसे–कैसे सवालों को तू सुलझाता
न तू भोजन खाता न पानी तू पीता
बिना रुके बिना थके सबकी तू सुनता जाता
जय गूगल, जय गूगल, जय गूगल भैया
न तेरी कोई जीजी न कोई तेरी मैया

विज्ञान एक वरदान है अभिशाप नहीं

रघुवीर सिंह नेगी
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

विज्ञान ने मानव जीवन शैली को, बना दिया आसान।
तकनीकी के इस युग में, हाई टेक बन गया हर इंसान।
पद यात्रा से हवाई यात्रा तक, मंजिल बन गई आसान।
समुद्रीयान ने सफल कर दिया, हर अन्वेषण अभियान।

विज्ञान ही युद्ध कला में परिवर्तन की, लाया भीषण क्रान्ति।
बिछड़ गये सब हाथी घोड़े भाले बरछे, तलवार तीरअन्दाजी।
अग्नि ब्रह्मोस त्रिशूलादि मिसाइलों ने, मिटा दी सबकी भ्रान्ति।
परमाणु बम के भय से जगत मे, छा गई अजीब सी शान्ति।

पहले चाँद, फिर मंगल ग्रह को खोज निकाला।
ढेर सारे उपग्रहों ने, आसमान में डेरा डाला।
मौसम के हर हाल का जिम्मा, इन्टरनेट ने संभाला।
हर पल इन्टरनेट से, पड़ गया सभी का पाला।

दूरदर्शन का चमत्कार, ट्रम्प की जीवन लीला का हुआ साक्षात्कार।
बटन दबाते ही दुनिया की खबरों का, किया पूरा दीदार।
घर बैठे देखा, बाबाओं की अनोखी दुनिया का छुपा बाजार।
अन्धविश्वासी आँखों पर बँधी, अधर्म की पट्‌टी को दिया उतार।

कम्प्यूटर का युग बदला लैपी मे, फिर आई नोटबुक।
नेताओं के मजे आ गये, वोट बैंक को मिला नया लुक।
स्टोर हो गई सभी फाइलें, कम्प्यूटर के इक फोल्डर मे।
सभी प्रश्नों का हल छुपा है, गूगल याहू के होल्डर मे।

मोबाइल युग को विज्ञान ने ही, धरती पर दी पहचान।
हर जेब मे है दुनिया भर की, समस्याओं का समाधान।
छोटी सी सिम, मगर इसमे फंसी है, बड़े बड़ों की जान।
कर लो दुनिया मुट्‌ठी में, यह विज्ञान का ही है वरदान।

प्राकृतिक आपदाओं से लड़ने मे, विज्ञान बन गया मददगार।
भूकम्प जैसी आपदा से बचने का, दे दिया नया आकार।
स्वास्थ्य सुधार में भी विज्ञान ने, किये कई चमत्कार।
वैज्ञानिकों की भूमिका बन गई, सभी सफलताओं की सृजनहार।

अभिशाप नही, श्रेष्ठतम वरदान है यह विज्ञान।
इसका दुरूपयोग करने वाले ने, गंवाई खुद की जान।
विज्ञान के सदुपयोग से बढ़ गया, कई गुना हमारा ज्ञान।
सम्पूर्ण जगत मे विज्ञान ने ही, पाया है पूरा मान सम्मान।

समय

कल्पना चंदेल
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

मैंने सोचा था बांध लुंगी,
बचपन की बाल सुलभ चचंलता को,
मैने सोचा था अपनी तरुणाई की,
यादों को समेट लुंगी आंचल में ?

बच्चे से तरुण, तरुण से युवा,
युवा से प्रौढ़ हो गए,
कुछ पता ही नही चला,
अब लगता है, हम अपने लिए कब जिए,

वही समय अच्छा था जब मां की आवाज
मंदिर की घंटी की तरह लगातार
कानों से टकराती रहती थी, उठ जा – उठ जा,
लेकिन हम करवट बदल– बदल कर सोने का नाटक करते थे।

अब परिस्थितियां बदल गई है,
समय की तेज रफ्तार की आपाधापी में
स्वयं अपने अस्तित्व को बचाना मुश्किल हो गया।
समय चलता जा रहा अपनी तेज रफ्तार से
हम भी उसकी लय/गति से बढ़ते जा रहे है

उसको तो विश्राम नहीं मिलेगा,
क्योंकि वह समय है,
चलते रहना ही उसकी नियति है,
पर सोचती हूँ इस तरह से बढ़ते रहने से

मुझे तो निश्चित रुप से विश्राम मिल जाएगा
क्योंकि मेरी तो एक सीमा तय है
अंतिम विश्राम के लिए,
चिर निद्रा में ही सही ?

संस्थान समाचार

स्वतंत्रता दिवस समारोह – 2017

स्वतंत्रता दिवस समारोह हर वर्ष की भाँति धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर कला प्रतियोगिता व विभिन्न खेल प्रतियोगिताऐं आयोजित की गयी जिसमे संस्थान के कर्मचारी एवम् उनके परिवारजनों ने बढ़ – चढ़कर भाग लिया। समारोह का समापन डा. मीरा तिवारी, वैज्ञानिक जी द्वारा विजेताओं को पुरूस्कार वितरित कर किया गया।

हिन्दी पखवाड़ा – 2017

ऑफिस के दैनदिन कार्यों मे हिन्दी भाषा के प्रयोग को प्रोत्साहन के उद्देश्य के साथ संस्थान में हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन दि० 14 सितम्बर से 28 सितम्बर 2017 तक किया गया। हिन्दी पखवाड़े का शुभारम्भ डॉ. उदय सिंह रावत, माननीय कुलपति, श्रीदेव सुमन उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय द्वारा किया गया। हिन्दी पखवाड़े मे आमंत्रित व्याख्यान, स्वरचित कविता पाठ, निबन्ध प्रतियोगिता एवम् वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

प्रथम आमंत्रित व्याख्यान डा. मुनि राम सकलानी, पूर्व निदेशक–उत्तराखण्ड भाषा संस्थान व पूर्व सचिव–उत्तराखण्ड हिन्दी अकादमी द्वारा दि० 15–09–2017 को दिया गया।

द्वितीय आमंत्रित व्याख्यान डा. राम विनय सिंह, विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, डी.ए.वी महाविद्यालय द्वारा दि० 15–09–2017 को दिया गया।

संस्थान के वैज्ञानिकों ने भी तकनीकी विषयों पर हिन्दी मे व्याख्यान दिया। संस्थान के कर्मचारियों के लिये निबन्ध प्रतियोगिता मे भी संस्थान कर्मचारियों की उत्साहजनक भागीदारी रही।

दूसरी तरफ स्कूली विद्यार्थियों के लिये आयोजित निबन्ध प्रतियोगिता व वाद–विवाद् प्रतियोगिता मे देहरादून शहर से विभिन्न स्कूलों ने भाग लिया। छात्रों ने विषय के पक्ष व विपक्ष में तथ्यपरक् विचार प्रस्तुत किये। हिन्दी पखवाडे का समापन समारोह मुख्य अतिथि डा. एल.एस. पालनी, कुलपति ग्राफिक एरा विश्वविद्यालय द्वारा किया गया ।

हिन्दी पखवाड़ा 2017

स्वतंत्रता दिवस 2017

गणतंत्र दिवस 2018